शोधादर्श

६६

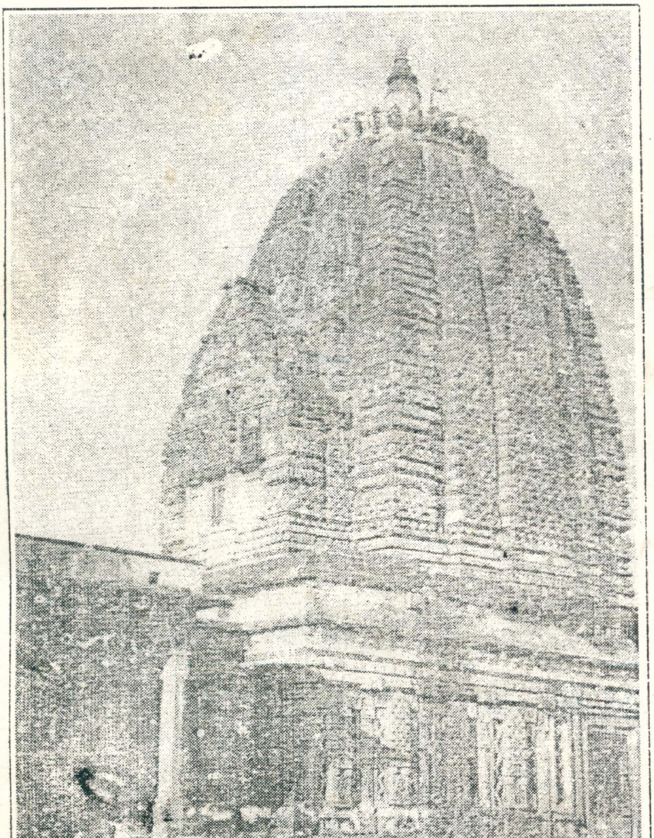

कलापूर्ण शिखरयुक्त बड़ा शांतिनाथ जिनालय
देवगढ़

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, लखनऊ

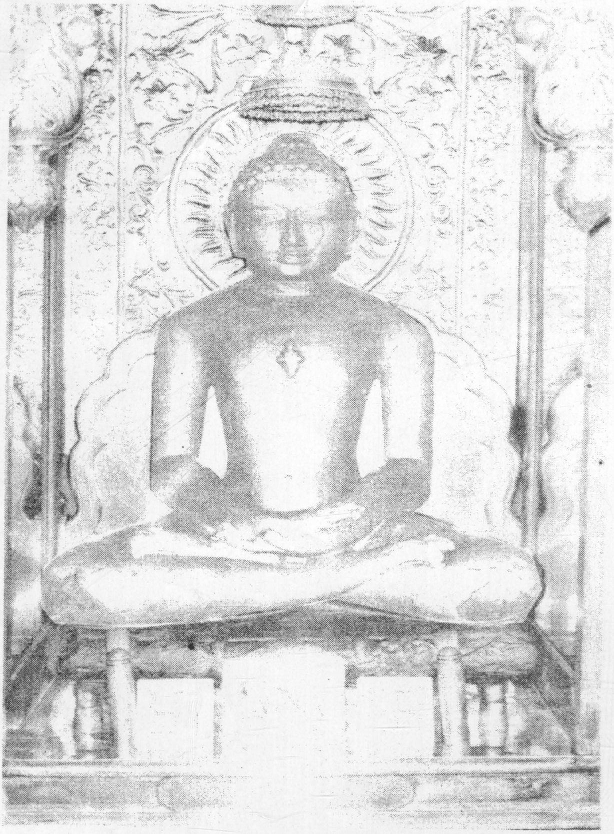

वर्धमान महावीर स्वामी

श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी

सन्मार्ग दिखा संसार को मुक्ति-रमा वरी महावीर ने
सिद्धशिला पर हुए आसीन धन्य किया निज जीवन उन्होंने
गौतम गणेश को भी हुआ कैवल्यज्ञान दिशाएं जगमगाने लगीं,
आरती उतारने दोनों की दीपमालिका सजायी घर-घर ने।।

आद्य सम्पादक : (स्व.) डॉ. ज्योति प्रसाद जैन
पूर्व प्रधान सम्पादक : (स्व.) श्री अजित प्रसाद जैन
सलाहकार : डॉ. शशि कान्त
सम्पादक : श्री रमा कान्त जैन
सह–सम्पादक : श्री नलिन कान्त जैन
श्री सन्दीप कान्त जैन
श्री अंशु जैन 'अमर'

प्रकाशक :
तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ. प्र.
ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ- २२६ ००४, टेलीफोन सं. २४५२०६४

णाणं णरस्स सारं- सच्चं लोयम्मि सारभूयं

शोधादर्श -६६

वीर निर्वाण संवत् २५३५ नवम्बर २००८ ई.

विषय क्रम

1.	गुरुगुण–कीर्तन : पं. मक्खनलाल शास्त्री	श्री रमा कान्त जैन	1
2.	सम्पादकीय : धार्मिक पर्वों पर पशुवध बन्दी	श्री रमा कान्त जैन	6
3.	जिनवाणी स्तुति	कवि भूधरदास	7
4.	सेठ खेमजी मूलजी भाई और सन्त गोविन्ददास	डॉ. ज्योति प्रसाद जैन	8
5.	कुछ रोचक प्रश्न एवं समाधान	श्री अजित प्रसाद जैन	11
6.	पद	कवि दौलतराम पल्लीवाल	12
7.	महावीर – एक ऐतिहासिक व्यक्ति	डॉ. शशि कान्त	13
8.	आ. कुन्दकुन्द के ग्रन्थों में सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र का पूर्वापर क्रम	प्रो. सागरमल जैन	20
9.	Rock-Cut Cave Architecture of the Jains in Orissa	श्री कैलाश नारायण टण्डन	23
10.	स्वतंत्र नारी संघ और सवारी करने का औचित्य क्या है ?	डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल	27
11.	शान्तिनाथ स्तवन		29
12.	यज्ञोपवीत का औचित्य	श्री मूलचंद लुहाड़िया	30
13.	सामयिक परिदृश्य : क्षणिकाएं	श्री रमा कान्त जैन	32
14.	तनाव या डिप्रेशन	श्रीमती इन्दु कान्त जैन	33

15.	पं. बेचरदास जीवराज दोशी	श्री रमा कान्त जैन	36
16.	तमिलनाडु के विल्लुपुरम जिले में प्राचीन जैन स्थल	श्री सन्दीप कान्त जैन	38
17.	परम अहिंसा धर्म	श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध'	40
18.	श्रीपाल चरित	श्री रमा कान्त जैन	41
19.	प्रभु वीर बिना तेरा ध्यान कहाँ	श्री लूणकरण नाहर जैन	43
20.	दीपावलि गीत	डॉ. महेन्द्र सागर प्रचण्डिया	44
21.	कर्म सिद्धान्त का रहस्य	श्री केवलचंद जैन	45
22.	दक्षिण भारत की जैन जातियां	श्री महावीर श्रीमंधर चव्हाण	46
23.	दिगम्बर जैन समाज की जातियों का विवरण	श्री कैलाशचंद्र जैन	49
24.	महावीर का व्यापक आत्म प्रसार हो गया	डॉ. महावीर प्रसाद 'प्रशान्त'	53
25.	अज्ञात स्वतन्त्रता सेनानियों के अन्वेषक श्री फूलचंद जैन	श्री रमा कान्त जैन	54
26.	पारदर्शी दोहे	श्री ऊ प्रकाश 'पारदर्शी'	58
27.	आध्यात्मिक कुण्डलियां	डॉ. गणेशदत्त सारस्वत	59
28.	साहित्य–सत्कार : ज्ञान प्रकाश द्वितीय भाग; एक न्यायमूर्ति का हलफ़नामा'; लोकतंत्र, न्याय एवं राहों के अन्वेषी'; धवल कीर्तिमान; आत्मा से परमात्मा का विज्ञान'; धर्ममंगल : धर्म मंथन (प्रथम किस्त) मंत्र तंत्र विशेषांक	– डॉ. शशि कान्त	60
	द्रव्य–संग्रह ; आओ जरा सोचें ; भगवान महावीर ; चतुर्गति भागाभाग पूर्वार्द्ध; मैनासुन्दरी ; विविध साहित्य	– श्री रमा कान्त जैन	63
29.	समाचार विविधा : अमेरिका में पंचकल्याणक महा–महोत्सव; मुरादाबाद में तीर्थंकर महावीर मेडिकल कालेज; जिला संग्रहालय शहडोल का पुनः नामकरण; सांगानेर में मोहिनी देवी बड़जात्या वानप्रस्थाश्रम का लोकार्पण; मूडबिद्री में प्राकृत भाषा–विज्ञान कार्यशाला; बाहुबली प्राकृत विद्यापीठ, श्रवणबेलगोला, के परीक्षा परिणाम; राष्ट्रीय जैन पत्रकार सम्मेलन एवं संगोष्ठी'; 'जीतो' की 'श्रमण आरोग्यम' योजना; 'जीतो' सम्मेलन व ट्रेड फेयर; जैन वर्ल्ड डॉट कॉम और उसके जनक विनोद भाई; रायबाग में प्राप्त प्राचीन मूर्तियां; पारसनाथ एक्सप्रेस का श्रीमहावीरजी में ठहराव; जैन मन्दिर इन्दिरानगर लखनऊ में काव्य–संध्या		69
30.	अभिनन्दन		75
31.	भावनाद्वात्रिंशतिका से	अमितगति	77
32.	शोक संवेदन		78
33.	पाठकों के पत्र		79
34.	बुधजन – सतसई से		87
35.	लेखादि अनुक्रमणिका (अंक 61–66)	श्री नलिन कान्त जैन	88
36.	करे अमल जो उसकी जय–जयकार है	डॉ. ज्योति प्रसाद जैन	95

गुरुगुण-कीर्तन

विद्यावारिधि पं. मक्खनलाल शास्त्री

तिलक रहे समाज केर, पंडित श्री मक्खनलाल।
शास्त्रज्ञान-अध्यापन में, रहे वह बेमिसाल।।

पंडितप्रवर मक्खनलाल उत्तर प्रदेश के आगरा जनपद के ग्राम चावली के वैद्य तोताराम के छह पुत्रों में पांचवे नम्बर की सन्तान थे। उनकी माताजी का नाम मेवारानी था। वह पद्मावती पुरवाल जाति के थे और उनका गोत्र 'तिलक' था। उनकी जन्म तिथि का उल्लेख तो उपलब्ध नहीं हो सका, किन्तु श्री सतीश कुमार जैन (दिल्ली) द्वारा नवम्बर, १९७५ में प्रकाशित "Progressive Jains of India" में पृष्ठ ८९ पर दिये गये उनके परिचय में उनका जन्म वर्ष १८९५ ई. अंकित मिला।

उनकी शिक्षा का श्रीगणेश गाँव की पाठशाला में हुआ। वहाँ से छठी कक्षा उत्तीर्ण करने के अनन्तर वह अग्रतर अध्ययन हेतु दिगम्बर जैन विद्यालय मथुरा और तदुपरान्त सहारनपुर गये और वहाँ संस्कृत का अध्ययन किया। तत्पश्चात् वैद्यक पढ़ने के विचार से पीलीभीत के ललितहरि वैद्यक विद्यालय में प्रवेश लिया, किन्तु वहाँ जिनदर्शन का साधन नहीं होने से वह वहाँ से चले आये और वाराणसी के स्याद्वाद विद्यालय में पं. अम्बादास शास्त्री से अध्ययन करने लगे। उक्त विद्यालय में रह उन्होंने क्वीन्स कालेज वाराणसी की 'नव्य-न्याय' में मध्यमा परीक्षा उत्तीर्ण की। तदनन्तर मोरेना जाकर पंडितप्रवर गोपाल दास बरैया से जैन सिद्धान्त सम्बन्धी ग्रन्थों का अध्ययन किया। वहाँ अध्ययनरत रह 'जैनदर्शनाचार्य' की परीक्षा उत्तीर्ण करने पर गुरुवर्य गोपालदास जी ने उन्हें संस्था की ओर से **'न्यायालंकार'** की उपाधि से विभूषित किया।

सन् १९१५ ई. में वह श्री ऋषभ ब्रह्मचर्याश्रम, हस्तिनापुर (मेरठ), में अध्यापक नियुक्त होकर गये थे। सन् १९७६ ई. में प्रकाशित **'विद्वत् अभिनन्दन-ग्रन्थ'** में पृष्ठ १३७ पर दिये गये उनके परिचय से विदित होता है कि आजीविकोपार्जन हेतु उन्होंने कलकत्ते में कपड़े की दुकान भी खोली थी जिसे पं. धन्नालाल और पं. खूबचन्द्र के अतीव आग्रह पर छोड़ वह मोरेना के श्री गोपाल दिगम्बर जैन सिद्धान्त

महाविद्यालय में शिक्षण हेतु आ गये। "Progressive Jains of India" के अनुसार वह घटना १९२७ ई. की है। उक्त महाविद्यालय के प्रधानाध्यापक पद का भार संभाल उन्होंने उस संस्था का अक्षुण्ण संचालन कर सही अर्थों में गुरुदक्षिणा चुकाई और समाजसेवा की। समाज में अनेक आचार-विचारवान उद्‌भट विद्वानों को जन्म-जीवन देने का उन्हें श्रेय रहा। उनमें डॉ. लालबहादुर शास्त्री, कुंजीलाल शास्त्री, भागचन्द्र शास्त्री, फूलचन्द्र शास्त्री, मल्लिनाथ शास्त्री, जिनचन्द्र शास्त्री, वर्द्धमान शास्त्री, श्रेयांसकुमार काव्यतीर्थ, नागराज शास्त्री, धर्मचक्रवर्ती शास्त्री प्रभृति के नाम उल्लेखनीय हैं। यही नहीं, आचार्य विमलसागरजी, मुनि पार्श्वसागर जी, प्रबोधसागरजी, भट्टारक देवेन्द्रकीर्तिजी व लक्ष्मीसेनजी को भी इनके शिष्य रहे होने पर गर्व रहा है।

पंडितजी मोरेना के उक्त महाविद्यालय के प्रधानाचार्य ही नहीं रहे, अपितु उसकी आर्थिक व्यवस्था के सुयोग्य स्तम्भ भी बने। वह महाविद्यालय के लिये कलकत्ते (कोलकाता) से सत्तर सहस्र रुपया लाये तो दिल्ली से बीस सहस्र रुपया लाये। ग्वालियर शिक्षा संभाग से मिलने वाली ३० रुपये की सहायता को १०० रुपये करवाया। महाराजा ग्वालियर से मिलकर बारह बीघा जमीन संस्था को दिलवाई। उनके संकेत मात्र पर सर सेठ हुकमचन्द्र ने १५०० रु. की सहायता ५००० रु. में परिवर्तित कर दी। संस्था के लिये अर्थ संचय करने वाले पंडित जी स्वयं इतने निर्लोभी रहे कि उन्होंने अपने लिये कभी कहीं से भेंट नहीं ली बताई जाती है।

अपने कार्यकाल में पंडितजी ने संस्था के ऊपरी भाग में वर्धमान चैत्यालय बनवाया, पंचपरमेष्ठियों की प्रतिमाएं भी बनवायी। अपने गुरु गोपालदास जी की शुक्ल वर्ण की साढ़े ३ फुट ऊँची पद्‌मासन मूर्ति भी बनवायी।

उनकी प्रतिष्ठा को ध्यान में रखते हुए तत्कालीन मध्यप्रदेश सरकार ने मोरेना में उन्हें ऑनरेरी मैजिस्ट्रेट के पद पर नियुक्त किया जिस पर वह लगभग १५ वर्ष तक कार्यरत रहे। वक्फ कमेटी में भी रहने का उन्हें सौभाग्य प्राप्त हुआ।

सन् १९१५ ई. में, जब पंडित जी श्री ऋषभ ब्रह्मचर्याश्रम, हस्तिनापुर, में अध्यापन कर रहे थे, उन्होंने (स्व.) ब्र. सीतलप्रसाद जी की प्रेरणा से ग्रन्थराज **पंचाध्यायी** की **सुबोधिनी** (भाषा) टीका लिखनी प्रारम्भ की थी। वह टीका सन् १९१८ ई. में इन्दौर से प्रकाशित हुई थी। उसे उन्होंने अपने गुरु पं. गोपालदास बरैया, जिन्होंने उक्त सिद्धान्त ग्रन्थ उन्हें पढ़ाया था, को समर्पित किया था। वह टीका

सन् १९७२ ई. में सुजानगढ़ से पुनः प्रकाशित हुई। उसके अतिरिक्त अकलंकदेव के **राजवार्तिक** और अमृतचन्द्राचार्य के **पुरुषार्थसिद्ध्युपाय** पर भी उन्होंने टीका रची। इन टीका ग्रन्थों की रचना करने और पत्र-पत्रिकाओं में यत्र-तत्र अपनी विद्वत्तापूर्ण लेखनी चलाने के साथ ही उन्होंने अनेक गंभीर उच्च कोटि के विस्तृत ट्रैक्ट भी लिखे जिनमें **सिद्धान्त सूत्र समन्वय, सिद्धान्त विरोध परिहार** मुख्य हैं। सैद्धान्तिक विवाद दूर करने हेतु लिखे गये ट्रैक्टों में **स्पृश्यास्पृश्यविचार, चर्चासागर पर शास्त्रीय प्रमाण, जैन धर्म हिन्दू धर्म से भिन्न है, मुनिविहार कानजीमत खण्डन** और **आर्यभ्रमनिराकरण** उल्लेखनीय हैं। उनकी अन्य ज्ञात कृतियां हैं- **वेदपुराणों में जैनधर्म का अस्तित्व** (१९३० ई., दिल्ली), **सिद्धान्त शास्त्र अध्ययन का अधिकार** (१९४१ ई., मोरेना), **जैन सिद्धान्त दर्पण, भाग-१** (१९४४ ई., मुम्बई); **जैन धर्म के मुख्य सिद्धान्त** (१९६५ ई.); **आगम मार्ग प्रकाशक** (१९७२ ई०, मोरेना); तथा **सोनगढ़ मान्यताओं का स्पष्टीकरण** (१९७६ ई., मोरेना)।

पं. रघुनाथ जी के पश्चात् और पं. सुमेरचन्द्र दिवाकर के पूर्व लगभग १२ वर्ष तक पं. मक्खनलाल जी **'जैन गज़ट'** साप्ताहिक के प्रधान सम्पादक रहे और अपने कार्यकाल में कुछ समय के लिये उस पत्र को अर्ध साप्ताहिक भी कर दिया था। तदनन्तर **'जैनदर्शन'** नामक स्वतन्त्र पाक्षिक का प्रकाशन किया जो कालान्तर में सिद्धान्त संरक्षिणी सभा का मुखपत्र बना। भा. दि. जैन महासभा परीक्षालय के वह वर्षों मन्त्री रहे।

कुशल अध्यापक और लेखनी के धनी होने के साथ ही पं. मक्खनलाल जी वक्तृता और शास्त्रार्थ में भी प्रवीण थे। दिल्ली और अम्बाला के शास्त्रार्थों में अपने विरोधियों को मौखिक और लिखित रूप से निरुत्तर कर देने के फलस्वरूप उन्हें **'वादीभकेसरी'** की उपाधि से अलंकृत किया गया था। दिल्ली शास्त्रार्थ मुद्रित भी हुआ। जब वह भा. दि. जैन महासभा के पत्र **'जैन गज़ट'** के सहायक सम्पादक थे तब किन्हीं बालचन्द्र रामचन्द्र कोठारी ने पत्र में मनगढ़न्त बातों का पर्दाफाश करने के लिये उन पर मुकदमा चलाया, किन्तु न्यायाधीश किणी ने अपने सिद्धान्त पर अडिग रहने वाले पंडित जी के पक्ष में निर्णय दिया। महासभा को उस संकट से उबारने के लिये पंडित जी को **'धर्मवीर'** उपाधि मिली। दिगम्बर जैन शास्त्रि परिषद

के पैठन अधिवेशन में उन्हें **'विद्यावारिधि'** की उपाधि प्रदान की गई। कलकत्ता जैन समाज ने दशलक्षण पर्व में उनके शास्त्र प्रवचन से प्रभावित हो **'न्यायदिवाकर'** की उपाधि से अलंकृत किया। दिगम्बर जैन शास्त्रि परिषद के सिवनी अधिवेशन तथा दिगम्बर जैन सिद्धान्त संरक्षिणी सभा के फरिहा अधिवेशन में उन्हें सभापति बनाकर सम्मानित किया गया।

देवदर्शन से आत्मीय गुणों का विकास और रात्रि भोजन में प्रच्छन्न त्रसजीव भक्षण का दोष मानने वाले पं. मक्खनलाल जी ने जीवन में अनेक सिद्धक्षेत्रों की वन्दना की थी। पंडित जी की मनोकामना रही कि समाज में धार्मिक वातावरण, सदाचार पालन और धार्मिक वात्सल्य बना रहे तथा सभी आत्मा का हित कर सकें।

अपने ज्ञान और आचरण से समाज में श्रावक और श्रमण दोनों के श्रद्धाभाजन बने पं. मक्खनलाल जी ने २२ नवम्बर, १९७९ ई. को लगभग ८४ वर्ष की वय में मोरेना में नश्वर देह का त्याग किया था।

मेरे पिताजी डॉ. ज्योति प्रसाद जी का पंडित जी से परिचय तब से रहा जब पंडितजी हस्तिनापुर के ब्रह्मचर्याश्रम में अध्यापन कार्य कर रहे थे। वह पंडित जी को सम्मान की दृष्टि से देखते थे। पंडित जी की कई कृतियां पिताजी के पुस्तक संग्रह में रहीं। जब पंडित जी ने २२ अक्टूबर, १९७० को **जैन गज़ट** में **पञ्चाध्यायी** के कर्तृत्व की समस्या को छेड़ते हुए **'परम पूज्य त्यागीगणों एवं विद्वानों से निवेदन'** शीर्षक से अपना लेख प्रकाशित किया था तब पिताजी ने प्रत्युत्तर में ११ फरवरी, १९७१ के **जैन-सन्देश शोधांक २९** में अपना लेख **'पञ्चाध्यायी का कर्तृत्व'** प्रकाशित किया था। उक्त लेख में उन्होंने पंडितजी की इस धारणा कि **पञ्चाध्यायी** के कर्ता आचार्य अमृतचन्द्र सूरि रहे होंगे का सयुक्तिक साधार निरसन कर यह प्रतिपादित किया था कि उस ग्रन्थ के रचनाकार १६वीं शती ईस्वी के उत्तरार्द्ध में विद्यमान रहे वह विद्वान पंडित पाण्डे राजमल्ल हैं जिन्हें अमृतचन्द्राचार्य कृत **समयसार नाटक** की **बालबोध भाषा वचनिका, प्राकृतपिंगल** (छन्दोविद्या), **जम्बुस्वामी चरित** और **लाटी संहिता** की रचना का श्रेय है और जो **'श्री स्याद्ववादनवद्य गद्य-पद्य विशारद'** तथा **'विद्वन्मणि'** विरुदों से विभूषित थे। कदाचित् इसी सम्बन्ध मं पंडित जी और पिताजी के मध्य कुछ समय तक पत्राचार भी हुआ, किन्तु पंडित जी का स्नेह पिताजी पर अन्त तक पूर्ववत बना रहा।

पंडित जी के दिवंगत हो जाने के उपरान्त **जैन गज़ट** ने, २७ अप्रैल, १९८२ ई. को उनकी स्मृति में एक ५८ पृष्ठीय सचित्र विशेषांक प्रकाशित किया था। उसका सम्पादन उनके सुयोग्य शिष्य और तत्समय उस पत्र के सम्पादक पं. कुंजीलाल शास्त्री ने किया था। उस विशेषांक में पण्डित जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को उजागर करने वाले कई पठनीय लेख एवं संस्मरण आदि संकलित रहे बताये जाते हैं। दैवयोग से, प्रयत्न करने पर भी, वह विशेषांक हमें पिताजी के संकलन में अलभ्य रहा और जैन गज़ट कार्यालय से भी हमें उपलब्ध नहीं हो सका। कदाचित् वह भी काल कवलित हो गया। अन्यथा उसके आधार से पंडित जी के पारिवारिक जीवन आदि के सम्बन्ध में कुछ और प्रकाश पड़ जाता।

यद्यपि अब पंडित जी सदेह हमारे मध्य नहीं हैं समाज को उनके द्वारा किये गये योगदान की स्मृतियां शेष हैं। इस वर्ष २२ नवम्बर को पंडित जी की २९वीं पुण्यतिथि है। इस अवसर पर उन पुण्यात्मा अग्रणी विद्वान् को हमारा सादर नमन् है।

- रमा कान्त जैन

"स्याद्वाद वारिधि, वादिगज केसरी, न्यायवाचस्पति श्रीमान् श्रद्धेय गुरुवर्य पं. गोपालदास वरैया आधुनिक विद्वानों में सर्वश्रेष्ठ माने जाते थे। उनमें इतनी क्या विशेषता थी, उनके समकक्ष और उनसे भी बढ़कर पांडित्य रखने वाले कई विद्वान उनके ही समय में हो गये हैं परन्तु इतना नाम और महत्व उनका नहीं हुआ जितना श्रद्धेय गुरु गोपालदास जी वरैया का हुआ है। इसके कारणों पर लक्ष्य डालने से पता चलता है कि उक्त गुरुवर में दो कारण थे, जिनसे वे सर्वमान्य बन गये और समकक्ष विद्वानों से बढ़कर महत्त्वशाली माने गये। पहिला कारण तो यह है कि वे विद्वत्ता के साथ पूर्ण निस्पृह वृत्ति वाले और गृहस्थोचित न्याय और धार्मिक आचरण वाले थे, दूसरा कारण उनकी धार्मिक गहरी लगन एवं धर्म प्रचार की तीव्र भावना तथा प्रयत्न था। बस, ये दो ही कारण ऐसे थे जिनके फलों को पाकर समाज आज उनका श्रद्धा से सदैव स्मरण करता है और उनकी जयन्ती मनाकर भूरि-भूरि प्रशंसा करता है।"

- गुरु गोपालदास वरैया स्मृति-ग्रन्थ में पृष्ठ ४४ पर प्रकाशित पं. मक्खनलाल शास्त्री न्यायालंकार के संस्मरण लेख "उनकी गौरवमयी गाथा" से

सम्पादकीय

धार्मिक पर्वों पर पशुवध बन्दी

वर्ष २००७ में गुजरात सरकार ने अपने प्रदेश के जैन *धर्मानुयायियों* की भावनाओं का समादर करते हुए उनके धार्मिक पर्व पर्यूषण के दौरान राज्य में मांस एवं मांसाहारी खाद्य वस्तुओं की बिक्री पर प्रतिबन्ध लगाया था। उस प्रतिबन्ध को कसाइयों के एक समूह ने उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी थी। न्यायमूर्ति एच. के. सेमा और न्यायमूर्ति मार्कण्डेय काटजू की पीठ ने उस जनहित याचिका की सुनवाई करते हुए अपने निर्णय में धार्मिक सहिष्णुता के आधार पर गुजरात सरकार के अल्पकालीन प्रतिबन्ध आदेश को उचित ठहराया और याचिका खारिज कर दी।

हमने **शोधादर्श**-६४ में अपने सम्पादकीय में उस ऐतिहासिक निर्णय का स्वागत किया था।

उच्चतम न्यायालय के उक्त निर्णय के परिप्रेक्ष्य में इस वर्ष अन्य राज्यों में भी जैन धर्मानुयायियों द्वारा पर्यूषण पर्व के दौरान कुछ दिन पशुवधशालाएं और मांस-मछली की दुकानें बन्द रखे जाने हेतु सरकारी आदेश पारित कराने के प्रयास हुए।

यहाँ यह ध्यातव्य है कि जैन धर्मानुयायी मुख्यतः दिगम्बर और श्वेताम्बर (मन्दिर मार्गी और स्थानकवासी) दो आम्नायों में विभक्त हैं और उनके पर्यूषण पर्व भी अलग-अलग तिथियों में पड़ते हैं। जहाँ श्वेताम्बर और स्थानकवासी जैन समाज भाद्रपद कृष्ण द्वादशी/त्रयोदशी से भाद्रपद शुक्ल पंचमी, जो ऋषि पंचमी और संवतसरी भी कहलाती है, तक आठ दिन पर्यूषण पर्व मनाता है, दिगम्बर जैन समाज भाद्रपद शुक्ल पंचमी से भाद्रपद शुक्ल चतुर्दशी तक १० दिन पर्यूषण पर्व अपरनाम दशलक्षण पर्व और तदनन्तर आश्विन कृष्ण प्रतिपदा को क्षमावाणी पर्व मनाता है। इस प्रकार जैन धर्मानुयायियों का पर्यूषण पर्व, भाद्रपद शुक्ल पंचमी को कॉमन मानते हुए, कुल १८ दिन का है। किन्तु कदाचित् देश में रह रहे अन्य धर्मानुयायियों और मांसाहारियों की भावनाओं को भी ध्यान में रखते हुए इतनी लम्बी अवधि तक पशुवधशालाओं और मांस - मछली की दुकानों को बन्द कराना शासन-प्रशासन के लिये व्यावहारिक न रहे पर्यूषण पर्व के दौरान कुछ चुनीन्दा दिनों पर ही इस प्रतिबन्ध की मांग की जाती रही है। यह देखने में आया है कि जहाँ दिगम्बर समाज के प्रतिनिधियों की शासन-प्रशासन में पहुँच रही वहाँ वे अपने पर्यूषण पर्व के दिनों में तथा जहाँ श्वेताम्बर समाज के

प्रतिनिधियों की पहुँच शासन-प्रशासन में रही वहाँ वे अपने पर्यूषण पर्व के दौरान उक्त प्रतिबन्ध लागू कराने में सफल रहे। किन्तु राजस्थान के जैन बन्धुओं का इस दिशा में प्रयास स्तुत्य रहा। वहाँ दिगम्बर और श्वेताम्बर जैन दोनों ने आपस में सलाह-समझौते से राज्य सरकार से पर्यूषण पर्व के दौरान जिन ९ दिन यह प्रतिबन्ध लगाने की मांगी की उनमें भाद्रपद शुक्ल पंचमी, जो दोनों पर्यूषण पर्व में कॉमन हैं, के अलावा ४ दिन (भाद्रपद शुक्ल एकम से चतुर्थी तक) श्वेताम्बर पर्यूषण पर्व के तथा ४ दिन (भाद्रपद ८, १०, १४ तथा आश्विन कृष्ण १) दिगम्बर जैनों के पर्व के सम्मिलित कर आपसी सद्भाव का परिचय दिया। राजस्थान सरकार द्वारा जारी किये गये जीवदया के इन आदेशों के लिये हमारी समिति ने दिनांक १२-९-२००८ को माननीया मुख्यमंत्री श्रीमती वसुन्धरा राजे को अपना आभार व्यक्त कर दिया। आगे देश के अन्य राज्यों में भी जैन बन्धुओं द्वारा इसी प्रकार सद्भावनापूर्ण संगठित प्रयास किया जाना अभीष्ट है।

यह भी अभीष्ट है कि यह प्रतिबन्ध मात्र पशुवधशालाओं और मांस-मछली की दुकानों की बन्दी तक ही सीमित न रहे अपितु मधुशालाएं और शराब की दुकानें बन्द कर मद्यपान निषेध भी लागू किया जाय। साथ ही ये प्रतिबन्ध पर्यूषण पर्व तक ही सीमित न रखकर अन्य धार्मिक पर्वों यथा- महावीर जयन्ती और महावीर निर्वाण दिवस (दीपावली) और राष्ट्रीय पर्व गणतन्त्र दिवस, स्वतन्त्रता दिवस और गांधी जयन्ती पर भी लागू किया जाय।

- रमा कान्त जैन

जिनवाणी स्तुति

कैसे करि केतकी कनेर एक कही जाय,
आकदूध-गायदूध अन्तर घनेर है।
पीरी होत रीरी[1] पै न रीस, करै कंचन की,
कहाँ काग-वानी कहाँ कोयल की टेर है।।
कहाँ भान भारौ कहाँ आगिया[2] विचारौ,
पूनौ को उजारौ, कहाँ मावस-अंधेर है।
पच्छ छोरि पारखी, निहारौ नेक नीके करि,
जैन बैन और बैन इतनौ ही फेर है।।

यह पद आगरा निवासी कवि **भूधरदास** (ईस्वी सन् १६९३-१७४९) के **जैन शतक** से उद्धृत है। १. रीरी-पीतल; २. आगिया-जुगनू

सेठ खेमजी मूलजी भाई और सन्त गोविन्ददास

-डॉ. ज्योति प्रसाद जैन

एक सत्य घटना है अब से लगभग सवा-सौ वर्ष पूर्व की। राजस्थान के बड़नेर नामक स्थान में एक मध्यवित्त खाते-पीते सद्गृहस्थ रहते थे। छोटा सा परिवार था। दुर्योग से उन सज्जन की मृत्यु हो गई और उनका किशोर पुत्र गोविन्ददास निराश्रित हो गया। मा-बाप के लाड़ प्यार में पला था, संसार का ज्ञान उसे कुछ भी नहीं था। उसके सीधेपन और भलमनसाहत का लोगों ने अनुचित लाभ उठाया। जो छोटा-मोटा पैतृक व्यापार था वह समाप्त हो गया और घर में जो थोड़ी बहुत सम्पत्ति थी वह भी शनैः-शनै समाप्त हो गई। माता और पत्नी की भी शायद मृत्यु हो गई। किसी बन्धु-बांधव, नाते-रिश्तेदार या भाई-बिरादरी ने कोई सहारा नहीं दिया, वरन् निकम्मा है, नालायक है, आदि उपाधियां देकर उसका उपहास ही किया। थोड़े ही समय के भीतर विपत्तियों के इस चतुर्दिक् पहाड़ के टूट पड़ने से युवक गोविन्ददास अत्यन्त अस्थिर और व्याकुल हो उठा। कहीं कोई कूल-किनारा दिखाई नहीं देता था। जीवन भार मालूम पड़ता था। ऐसी स्थिति में एक दिन उसे यकायक ध्यान आया कि उसके स्वर्गीय पिता कारंजा स्वामी जी के भक्त थें और उसनें एक-दो बार उन्हें यह कहते सुना था कि कैसा भी संकट या विपत्ति आये स्वामी जी कें पास जाने से बड़ी शान्ति मिलती है और समस्या का समाधान भी हो जाता है। अस्तु गोविन्ददास ने कारंजा जाने का निश्चय किया और एक दिन वह स्वामी जी की शरण में पहच गया।

कारंजा के यह स्वामी जी सेनसंघी भट्टारक सिद्धसेन के शिष्य एवं पट्टधर भट्टारक लक्ष्मीसेन थे जो १८४२-१८६५ ई. में विद्यमान थे। इनके शिष्य एवं **पट्टधर** भ. वीरसेन १८७६-१६३८ ई. थे जो **समयसार** के उत्तम व्याख्याता थे। स्व. ब्र. सीतल प्रसाद जी ने इन्हीं के सान्निध्य में ग्रन्थराज **समयसार** का अध्ययन किया था। उपरोक्त तीनों ही भट्टारक स्वामी पर्याप्त दीर्घजीवी श्रेष्ठ विद्वान और प्रभावशाली थे। युवक गोविन्ददास लक्ष्मीसेन स्वामी से मिला और अपना दुःख दर्द उनसे कहा। स्वामीजी ने स्नेह के साथ उसे सान्त्वना दी। उन्होंने देखा कि लड़का भला और होनहार

है, किन्तु सांसारिक ज्ञान से प्रायः शून्य और मानसिक अस्थिरता एवं निराशा से ग्रस्त है। आवश्यकता इस बात की है कि वह किसी काम-धंधे में लगकर अपने दुःख कष्टों को भूले और संसार एवं जीवन की वास्तविकता का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करे । अतएव उसे समझा-बुझाकर सूरत के सेठ खेमजी मूलजी भाई के पास भेज दिया। गोविन्ददास को सेठ जी के नाम एक पत्र भी दे दिया। सूरत पहुचने पर सहज ही सेठ जी के स्थान का पता चल गया। वह बहुत बड़े आदमी थे और सूरत के व्यापारियों में प्रायः सर्वोपरि थे। बड़ी भारी हवेली थी और फाटक पर दरबान नियुक्त था जिसने इन्हें फटेहाल एवं बदहवास देखकर अन्दर नहीं जाने दिया, किन्तु जब इसने कहा कि सेठ जी के नाम कारंजा के स्वामी जी का पत्र लेकर आए हैं तो भीतर से अनुमति प्राप्त करके उसे सेठ जी के सम्मुख पहुचाया गया। सेठ जी ने स्नेह पूर्वक उसका कुशल समाचार पूछा, पत्र लेकर पढ़ा और कहा कि पहले स्नान व भोजन आदि से निवत्त हो ले और सायंकाल में उनसे मिले। सेठ जी के संकेत पर उसकी सब सुव्यवस्था हो गई।

सेठ स्वामी जी का बड़ा आदर करते थे। वह धनाढ्य एवं कुशल व्यापारी ही नहीं थे, वरन् धार्मिक प्रवृत्ति के, धर्म के रहस्य को जानने-समझने और जीने वाले सज्जन थे। मनुष्य के भी बड़े पारखी थे। उन्होंने युवक गोविन्ददास के चरित्र, क्षमता और समस्याओं को शीघ्र ही समझ लिया। उसके रहने-सहने का उचित प्रबन्ध कर दिया और क्योंकि उसे कोई काम आता नहीं था उसकी नियुक्ति सूरत के बन्दरगाह की गादी पर कर दी जहा सेठ के व्यापारी जहाज विदेशों से बराबर आते-जाते थे। गोविन्ददास को जो काम बताया जाता परिश्रम एवं उत्साहपूर्वक करता। सेठजी की वह मन ही मन पूजा करता था। एक दिन गादी पर समाचार मिला कि सेठ के दो जहाज, जिनमें करोड़ो रुपयों का माल भरा था, मार्ग में कहीं गुम हो गए हैं, सम्भवतया किसी समुद्री तूफान में नष्ट हो गए हैं । ऐसी महत्वपूर्ण सूचना को सेठ तक तुरन्त पहुचाने के विचार से गोविन्ददास दौड़कर सेठ जी की गद्दी पर पहुचा और हाफते-हाफते टूटे-फूटे शब्दों में समाचार सुनाया। सुनकर भी सेठ जी के मस्तक पर तनिक भी बल नहीं पड़ा वे वैसे ही शान्त भाव से सस्मित बैठे रहे। उलटे उससे ही कहने लगे, "क्यों इतना परेशान हो रहा है? यह सब तो पाप-पुण्य का खेल है। व्यापार में क्या और जीवन में क्या, ऐसा होता ही रहता है। जाओ और विश्राम करो।" गोविन्ददास को सेठ के इस व्यवहार पर आश्चर्य हुआ। कैसा आदमी है कि इतनी बड़ी हानि के समाचार को भी जिसके कारण शायद उसका दिवाला ही निकल जाय उसने ऐसे सहज शान्त भाव से कैसे ले लिया?

तीन-चार दिन बाद गोविन्ददास सदा की भांति गादी पर कार्य कर रहा था कि वहा पर समाचार मिला कि सेठ के उस दिन खोये हुए जहाज सुरक्षित हैं। तूफान में फंस कर भटक तो गये थे, किन्तु अब सकुशल बंदरगाह की ओर लौट रहे हैं। गोविन्ददास तुरन्त दौड़कर यह सुसमाचार देने के लिए सेठ के पास पहुचा। सेठ जी ने पूछा, "ऐसा बदहबास क्यों हो रहा है? जलादि पीकर स्वस्थ हो ले तब बताये क्या बात है।" उसने सेठ को जहाजों के सुरक्षित रहने का सुसमाचार दिया। इस बार भी सेठ पूर्ववत सहज शान्त सस्मित बैठे रहे। गोविन्ददास आश्चर्य से अवाक् रह गया तो उसकी मनः स्थिति समझकर सेठ ने उसे समझाया, "यह सब कर्माधीन होता है, इसमें हर्ष-विषाद कैसा? मनुष्य का कर्तव्य तो अपने सामने जो कार्य हैं उन्हें सच्चाई और कुशलता पूर्वक करते रहना है, बाकी तो 'हानि-लाभ, जीवन-मरण, यश-अपयश विधि हाथ' से संतोष करना चाहिए। अपने मानसिक सन्तुलन और सहज शान्ति को किसी स्थिति में नहीं खोना चाहिए।"

सेठ जी के इस व्यवहार से गोविन्ददास अत्यन्त प्रभावित हुआ। वह उनके चरणों में गिर पड़ा और कहा कि उनकी कृपा से उसे सबसे बड़ी शिक्षा और जीवन का लक्ष्य प्राप्त हो गया है। थोड़े दिन पश्चात् ही सेठ जी की आज्ञा लेकर वह सूरत से चल पड़ा, कारंजा में स्वामी जी से मिला और उन्हें बताया कि उनके प्रसाद से ही सेठ खेमजी मूल जी भाई जैसे स्थितिप्रज्ञ सज्जन के सम्पर्क से उसकी जीवन दृष्टि में अद्भुत क्रान्ति हो गई है। वह जन्मभूमि बड़नेर आया। थोड़े ही दिन में अपने अध्यवसाय और ईमानदारी से उसने अपनी आजीविका का साधन अच्छा बना लिया, उसमें पर्याप्त उत्कर्ष भी किया, किन्तु उसे तो स्थितिप्रज्ञता की छूत लग गई थी। अन्ततः बड़नेर के संत गोविन्ददास के रूप में उसकी दूर-दूर तक प्रसिद्धि हुई।

कविवर भागचन्द जी के 'चिन्मूरति दृग्धारी' जैसी 'अटपटी रीति' वाले सेठ खेमजी मूलजी भाई सम्यग्दृष्टि थे या नहीं, यह कहना तो कठिन है, किन्तु उनकी स्थितिप्रज्ञता, मानसिक संतुलन और समदर्शिता का लोहा भट्टारक लक्ष्मी सेन जैसे ज्ञानी संत मानते थे। और यह तो तथ्य है कि उनके अल्पकालीन संसर्ग ने गोविन्ददास जैसे एक सामान्य युवक को प्रसिद्ध संत बना दिया। **जिनधर्म में प्रतिपादित सम्यक्त्व की साधना का यह चमत्कार प्रत्येक गृहस्थ स्त्री-पुरूष के स्वयं के जीवन में सहज घटित हो सकता है, बशर्ते कि वह उसके प्रति जागरूक तथा प्रयत्नवान हो। सच्ची धार्मिकता यही है।**

[जैन सन्देश शोधांक ५०, (३१ मार्च, १९८३) से उद्धृत]

कुछ रोचक प्रश्न एवं समाधान

- श्री अजित प्रसाद जैन

सन्मति सन्देश (जनवरी १९९९) में हमें चर्चा-समाधान के अन्तर्गत कुछ रोचक प्रश्न और उनके शास्त्रोक्त समाधान देखने में आये हैं जिन्हें हम अपने पाठकों के लाभार्थ नीचे साभार (अपनी टिप्पणी के साथ) उद्धृत कर रहे हैं-

प्रश्न (१) क्या आर्यिका को परम पूज्य लिखा जा सकता है तथा क्या उसकी पूजा की जा सकती है एवं अर्घ चढ़ाना उचित है ?

समाधान- पूजा-भक्ति देव, शास्त्र, गुरु की की जाती है। गुरु संज्ञा केवल मुनिराज को ही प्राप्त है। आर्यिका उत्तमं श्राविका है। श्रावक-श्राविकाओं को न परमपूज्य लिखा जाता है, न उनकी पूजा होती है। इनको वन्दना या इच्छाकार कहा जाता है, नमस्कार या नमोस्तु नहीं। अर्हन्त, सिद्ध भगवान को परम पूज्य और दिगम्बर मुनिराज को पूज्य लिखते हैं। (**संयम प्रकाश उत्तरार्द्ध**, पृष्ठ ७४०)

(**टिप्पणी-** आजकल कई धार्मिक पत्र-पत्रिकाओं (विशेषकर जो आर्ष मार्ग की रक्षा करने का दावा करती हैं) के द्वारा आर्यिका माताओं को परम पूज्य लिखा जाता है। इसी प्रकार भट्टारकों को भी परमपूज्य लिखा जाता है। यद्यपि भट्टारक गण 'जगद्गुरु', 'महास्वामी' जैसी सर्वोच्च उपाधियों से अपने को अलंकृत किए हुए हैं तथा अपनी विद्वत्ता और धर्म संरक्षण के कार्यों के कारण पूर्ण सम्मान के अधिकारी भी हैं तथापि आचार की दृष्टि से मोक्ष मार्ग के साधकों में उनकी गणना गृह-त्यागी ब्रह्मचारियों में ही किया जाना उचित होगा।

आर्यिकाओं की पूजा करना, उनको अर्घ अर्पित करना, उनकी आरती करना आज आम प्रथा हो गई है। कुछ की तो पूजायें भी रच ली गई हैं। इस प्रथा के पक्षधर विद्वान यदि इसके समर्थन में कोई शास्त्रोक्त प्रमाण हो तो उस पर प्रकाश डाल कर हमारा तथा हमारे पाठकों का ज्ञानवर्द्धन करने की कृपा करें।)

प्रश्न (२) - क्या मुनिराज किसी पशु के साथ फोटो खिंचवा सकते हैं?

समाधान- ऐसी फोटो तो शौकीन आदमी ही खिंचवाता है। मुनिराज तो फोटो भी नहीं खिंचवाते।

(**टिप्पणी-** आजकल तो अधिकांश मुनिराजों व आर्यिकाओं के विभिन्न मुद्राओं में भव्य रंगीन फोटो चित्र प्रचुर मात्रा में देखने में आते हैं। चातुर्मास पत्रिका हों या

किसी मुनिराज/आर्यिका के सान्निध्य में सम्पन्न होने वाले पूजा विधान की पत्रिका हो या स्मारिका हो उसमें तो उनके तथा उनके गुरु महाराज के भव्य रंगीन फोटो चित्र होना अनिवार्य है।)

प्रश्न (३) - भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिमा यदि देवी पद्मावती की मूर्ति के सिर पर हो तो वहाँ पूजा भक्ति कर सकते हैं क्या ?

समाधान- एक नारी के सिर पर अर्हन्त भगवान की प्रतिमा होना ही अयोग्य है, फिर पूजा का तो प्रश्न ही नहीं है।

(**टिप्पणी-** भगवान पार्श्वनाथ के ऊपर कमठ का उपसर्ग तथा उसके निवारण के लिए धरणेन्द्र का उनके सिर पर फणावलि का छत्र धारण करना उनके केवलज्ञान पूर्व की घटना है। केवलज्ञान प्राप्ति के बाद कोई उपसर्ग नहीं रह जाता। तीर्थंकर प्रतिमा भगवान के समवशरण में विराजने के प्रतीक स्वरूप बनाई जाती है तथा पूजी जाती है। अतः विशुद्ध सैद्धान्तिक माप दण्ड से तो भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिमा पर फणावली का छत्र बनाया जाना भी उचित नहीं है।)

(शोधादर्श-२८, मार्च १९९६ से उद्धृत)

पद

रे मन तेरी को कुटेव यह, करन-विषय में धावै है।
इनही के वशतू अनादि तैं, निज स्वरूप न लखावै है।
पराधीन छिन-छिन समाकुल, दुरगति-विपति चरवावै है।।
फरस विषय के कारन वारन, गरत परत दुख पावै है।
रसना इन्द्रीवश झष जल में, कंटक कंठ छिदावै है।।
गंध-लोल पंकज मुदित में, अलि निज प्रान खपावै है।
नयन-विषयवश प्रदीप-शिखा में, अंग पतंग जरावै है।।
करन-विषय वश हिरन अरन में, खलकर प्रान लुभावै है।
'दौलत' तज इनको, जिन को भज, यह गुरु-सीख सुनावै है।।

उपर्युक्त पद में हाथरस निवासी अध्यात्म रसिक **कवि दौलतराम पल्लीवाल** (१७९८-१८६६ ई.) ने चंचल मन की इन्द्रिय सुखों के पीछे भागने की कुप्रवृत्ति, जिसके कारण वह आत्मस्वरूप नहीं देख पाता, पर सशक्त प्रहार किया है। स्पर्श, रसना, घ्राण, चक्षु और कर्ण इन्द्रियों के सुख की वासना में फंसकर क्रमशः गज, मीन, अलि, पतंग और हरिण की कैसी दुर्गति हुई उसका उदाहरण देते हुए कवि ने सभी को इन्द्रियों की सुख-वासना से बचकर जिनदेव को भजने का परामर्श दिया है।

महावीर - एक ऐतिहासिक व्यक्ति

- डॉ. शशि कान्त

इतिहास और पुराण

इतिहास के अध्येता और श्रद्धासिक्त भक्त की सोच में मौलिक भेद यह है कि इतिहासज्ञ किसी व्यक्ति के अवदान का मूल्यांकन अधुनाज्ञात तथ्यों और तत्कालीन समग्र परिस्थिति के सापेक्ष करेगा जब कि भक्त उसे एक पौराणिक दिव्य आकृति के रूप में देखेगा। दिव्यत्व, देवत्व और अपौरुषेयत्व आरोपित कर देने से वह एक निर्विकार पाषाणखंड बन कर मूढ़ जनों की अन्ध श्रद्धा का विषय, प्रतिमान या प्रतीक मात्र रह जायेगा - उसका ऐतिहासिक व्यक्तित्व समाप्त हो जायेगा। उसके बारे में भिन्न-भिन्न कथायें गढ़कर तथा उसके नाम से चिन्तन और उपदेश प्रचारित करके उसे महिमा-मंडित किया जा सकता है - परन्तु इसका लाभ उसे नहीं वरन् उन पुराण-शास्त्र सृजकों को होता है जो उसके नाम की आड़ में श्रद्धा का धन्धा चलाते हैं या वैचारिक स्पर्धा में तर्क-संधान द्वारा अपनी विद्वत्ता की धाक जमाना चाहते हैं। यह हाल भारत में महावीर, बुद्ध और शंकराचार्य का हुआ और भारत के बाहर ईसा का।

महावीर के साथ अत्याचार कुछ अधिक ही हो गया। बुद्ध के वचन किसी-न-किसी अंश में आज भी उपलब्ध हैं, शंकराचार्य द्वारा प्रणीत भाष्य विद्यमान है, और ईसा के भी गास्पेल संकलित हैं,- परन्तु महावीर की तो एक मात्र नग्न मुद्रा ही उनके उपासकों की धरोहर है। क्यों पिछले दो हजार वर्षों से उनका नाम लेकर अपनी दुकान चलाने वाले जैन धर्म के दिग्गज आचार्य-पंडित-विद्वान-महाराज और मातायें ऐसा करते आ रहे हैं? महावीर की २६००वीं जन्म-जयंती पर अपेक्षा यह थी कि अब तो अपनी-अपनी रोटी सेंकने और अपनी ढपली पर अपना राग अलापने से ऊपर उठकर, कुछ लोग तो इस प्रश्न पर स्वतंत्र, वस्तुनिष्ठ व तथ्य-सापेक्ष अनुसंधान-चिन्तन करने का स्वान्तः सुखाय प्रयत्न करेंगे ताकि उस महापुरुष का सार्थक स्मरण हो सके। खेद की बात है कि ऐसा कुछ नहीं हुआ।

महावीर कालीन सामाजिक-राजनीतिक स्थिति

२६०० वर्ष पहले भारत के जिस भूभाग में महावीर ने जन्म लिया, पले-बढ़े और वैचारिक-सामाजिक क्रान्ति का सूत्रपात किया, वहां की समग्र परिस्थिति ही वह

पृष्ठभूमि थी जिसने उनके ऐतिहासिक व्यक्तित्व का निर्माण किया। विभिन्न साहित्यिक स्रोतों से उस समय का जो चित्र उभर कर आता है उसमें प्रमुखता **वेदों** का आश्रय लेकर क्रियाकांडी ब्राह्मण वर्ग के जनमानस पर प्रभुत्व की है। उसने राज्य-शक्ति को लुंज कर दिया था, अर्थ-व्यवस्था को खोखला कर दिया था, निठल्लों की संख्या निरन्तर बढ़ती जाती थी, और जन्म के आधार पर वर्गभेद ने विघटन द्वारा समाज-व्यवस्था को छिन्न-भिन्न कर दिया था। बिहार और उत्तर प्रदेश के जिन क्षेत्रों में यह दुर्व्यवस्था अपने चरम पर थी, वहां मगध और कोसल में राज्य शक्ति को केन्द्रित करने के सुनियोजित प्रयास प्रारंभ हो गये थे तथा वर्धमान महावीर, गौतम बुद्ध, मक्खलि गोसाल, पूरण कस्सप आदि विचारक समाज-व्यवस्था में आवश्यक सुधार लाने की दिशा में आगे आ गये थे। धन के अर्जन और उत्पादन में लगे वैश्य भी भूमि, व्यापार और श्रम की सुनियोजित व्यवस्था के लिए आतुर थे। राज्य-नियोजक और समाज-चिन्तक दोनों ही ब्राह्मण वर्ग के नहीं थे वरन् क्षत्रिय या राजन्य वर्ग के थे, और इनका एकल लक्ष्य लोगों को ब्राह्मण-पुरोहित वर्ग की बौद्धिक-सामाजिक दासता व शोषण से मुक्त कराना था। महावीर और बुद्ध के प्रति मगध (पटना), कोसल (अयोध्या, श्रावस्ती) और वत्स (कौशाम्बी) की राज्य शक्तियों का विशेष समादर इसीलिए था क्योंकि उनका कार्य एक-दूसरे का पूरक था।

लोगों की जान-माल की रक्षा का भार, समाज में व्यवस्था लागू करने का दायित्व और अर्थ-व्यवस्था के सुचारू रूप से चलते रहने की सुनिश्चिती राज्य-संचालन से जुड़े क्षत्रिय वर्ग के आवश्यक कार्य थे। परन्तु ब्राह्मण वर्ग लोगों में अपना प्रभुत्व बनाये रखने के लिए क्षत्रियों को अपने से हीन सूचित करता था, उनको शास्त्रीय शिक्षा से वंचित रखता था, और एक ग्रन्थ (जिसको **वेद** की संज्ञा से अभिहित करता था) के आश्रय से विभिन्न प्रकार के कर्मकांडों द्वारा जनसाधारण में अन्धविश्वास का प्रसार करता था। क्षत्रिय वर्ग के नवयुवकों में उसके प्रति स्वाभाविक रूप से आक्रोश था। उन्होंने ब्राह्मणों के विरोध के बावजूद उनके वेदों का सूक्ष्म अध्ययन किया और पाया कि वह सम्यक् ज्ञान नहीं है वरन् एक ढकोसला है जिसकी आड़ में समाज पर अपनी पकड़ बनाये रखने के लिए ब्राह्मण विभिन्न प्रकार के आडम्बर करते रहते हैं। यही वह सामाजिक और वैचारिक क्रान्ति थी जिसके सूत्रधार, प्रस्तोता और प्रवर्तक महावीर और बुद्ध थे।

बुद्ध

बुद्ध के शिष्यों में ज्ञानी-मानी ब्राह्मण भी थे। परन्तु उनके निकटतम शिष्य आनन्द शाक्य थे और उपालि नाई थे। ब्राह्मण-विरोध भगवान बुद्ध के अनुयायियों में निरन्तर मुखर रहा - आज भी है जो ब्राह्मण-श्रेष्ठता की मनुवादी व्यवस्था को तिरस्कार की दृष्टि से देखता है। प्राचीन पालि और तदोपरान्त संस्कृत में लिखे गये बौद्ध साहित्य में इस बिन्दु पर कोई विवाद नहीं है। अन्ततः ब्राह्मण मनीषा को स्थिति से समझौता करने के लिए बाध्य होना पड़ा और बुद्ध को विष्णु के दश-अवतारों में नवम् अवतार स्वीकार कर सन्धि करने का प्रयत्न किया गया। यह सब बुद्ध के प्रायः एक हजार वर्ष बाद ४थी-५वीं शती ईस्वी में सम्पन्न हुआ, तदपि बौद्धों का ब्राह्मण-श्रेष्ठता-ज्येष्ठता विरोधी स्वर बन्द नहीं किया जा सका। अतः ८वीं-९वीं शती ईस्वी में शंकराचार्य ने बौद्धों के उच्छेद के लिए पुनः तुमुलनाद किया, परन्तु उनकी मनोकामना की पूर्ति आगे २०० साल बाद इस्लाम के बन्दों ने की। मुसलमान आक्रामकों का सारा आक्रोश 'बुत' के प्रति था जो 'बुद्ध' का ही फारसी भाषा में अपभ्रष्ट रूपान्तर है। कदाचित इसी कारण तालिबान की कट्टरपंथी इस्लामी सरकार द्वारा अफगानिस्तान में विश्व की अप्रतिम कला-सांस्कृतिक धरोहर बुद्ध की विशाल बुतों के विध्वंस पर चतुष्पीठ के शंकराचार्यों की वाणी नहीं फूटी क्योंकि यह तो शंकराचार्य द्वारा उद्घोषित बौद्ध धर्म-उच्छेदन का ही एक प्रतिफलन था।

महावीर

भगवान महावीर की स्थिति भिन्न है। आजकल की भाषा में कहा जाये तो ब्राह्मणों ने महावीर को हाई-जैक कर लिया - ऊपर-ही-ऊपर उड़ाकर अपने कब्जे में कर लिया। महावीर के ग्यारहों प्रमुख शिष्य या गणधर वेदपाठी-यज्ञनिष्ठ ब्राह्मण थे और वे सभी अपने ब्राह्मण समुदाय के साथ महावीर के संघ में संख्याबल-सहित सम्मिलित हुए। महावीर-भक्त दिगम्बर सम्प्रदाय ने उनका स्वयं का बोलने का अधिकर ही छीन लिया - वह तो केवल ॐ-कार ध्वनि करेंगे, व्यवस्था और प्रवचन तो वेद-पारंगत ब्राह्मण गणधर ही करेंगे। महावीर के दूसरे भक्त श्वेताम्बर सम्प्रदाय ने उनका क्षत्रिय मूल ही समाप्त कर दिया - वैशाली के निकट ब्राह्मण कुण्डग्राम में ब्राह्मण ऋषभदत्त से उनकी ब्राह्मण पत्नी देवनन्दा की कोख में महावीर ने गर्भधारण किया, बाद को क्षत्रिय कुण्डग्राम के क्षत्रिय सिद्धार्थ की क्षत्रिय पत्नी त्रिशला की कोख में वह गर्भ देवमाया से अन्तरित हुआ - अतः बीजरूप महावीर ब्राह्मण ही हुए और इसलिए अब

उनके बोलने में ब्राह्मण वर्ग को कोई बाधा नहीं थी। आखिर को हमारा संस्कार ही तो बोलेगा। तदपि उनका प्रत्यक्ष अनुवचन उपलब्ध नहीं है। जो कुछ अब उपलब्ध है वह अन्य पुरुष का वचन है - जम्बुस्वामी ने अपने गुरु सुधर्मा स्वामी (महावीर के पांचवें ब्राह्मण गणधर) से गौतम (प्रथम ब्राह्मण गणधर) के प्रश्नों का महावीर द्वारा दिया गया उत्तर, जैसा सुना। और जम्बुस्वामी ने उस सबको महावीर निर्वाण के २४ वर्ष बाद अगले ३८ वर्षों में अर्थात् ई. पू. ५०३ से ४६५ के बीच संकलित किया।

द्वादशांग श्रुत

श्वेताम्बर सम्प्रदाय में महावीर द्वारा उपदेशित बारह अंगों में से प्रथम ११ अंग सुरक्षित बताये जाते हैं जिनका उपलब्ध रूप महावीर के निर्वाण के ९८० वर्ष बाद, अर्थात् ४५२ ईस्वी के लगभग, वल्लभी में देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण द्वारा संकलित किया गया था। दिगम्बर सम्प्रदाय इन ११ अंगों को मान्यता नहीं देता और इन्हें लुप्त मानता है, वह मात्र १२वें अंग के पुष्पदंत व भूतबलि के माध्यम से 'षट्खण्डागम' के रूप में प्राप्त अंश को ही महावीर के उपदेश का अंग मानता है - इसे प्रथमतः दूसरी शती ईस्वी में संकलित किया गया माना जाता है तदपि इसका प्रकटन वीरसेन व जिनसेन की 'धवल' टीकाओं में हुआ जिन्हें शक ७५९ (=८३७ ई.) में पूरा किया गया। श्वेताम्बर इस १२वें अंग को मान्यता नहीं देते।

द्वादशांग श्रुत के संकलन के उपरोक्त विवरण से सूचित होता है कि दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों ही परंपराओं में आगम-संकलन, यथार्थ में साहित्य-सृजन दूसरी शती से ९वीं शती ईस्वी के दौरान हुआ। ध्यातव्य है कि उसी समय में ब्राह्मणीय साहित्य की रचना भी की जा रही थी, अतः यह स्वाभाविक है कि जो कुछ पौराणिक ढपोड़शंख भारतीय मनीषा परिकल्पित कर सकती थी और कर रही थी उसकी सहभागिता उस समय के समस्त भारतीय साहित्य में हुई। इसका परिणाम यह हुआ कि पुराण इतिहास पर हावी हो गया, कुछ तथ्य तो विस्मृत हो चुके थे और बाकी विस्मृत कर दिये गये, तथा जैन साहित्य में विशेष रूप से महावीर का सामाजिक-वैचारिक क्रान्ति का स्वर दबा दिया गया।

हिंसा-अहिंसा

जिस हिंसा के विरुद्ध महावीर के चिन्तन की सार्थकता की दुहाई दी गई, वह हिंसा जैन मानस में इतने गहरे पैठ गई कि जैन मनीषियों ने अपने आराध्य को 'पूज्य' और 'श्रद्धेय' (अरहंत - अर्हत्) के बजाय 'शत्रु के हंता' (अरिहंत) के रूप में स्मरण

करना प्रारंभ कर दिया। महावीर द्वारा अहिंसा, सत्य, अस्तेय व अपरिग्रह के साथ ब्रह्मचर्य के जोड़ दिये जाने पर उनके भक्त मनीषियों ने ब्रह्मचर्य को भी हिंसा से सम्बद्ध कर दिया। पंचम गणधर श्री सुधर्म स्वामि विरचित पंचम अंग **बियाहपण्णत्ति सुत्तं,** जो **'भगवती सूत्र'** के नाम से विख्यात है, के शतक २ के उद्देशक ५ के सूत्र ६ में मैथुन सेवन से असंयम पर **'अभयदेव वृत्ति'** में विवेचना दी गई है कि 'मैथुन सेवन करते हुए पुरुष के मेहन (लिंग) द्वारा स्त्री की योनि में रहे पंचेन्द्रिय जीवों का विनाश होता है।''

कर्मों के नाश का आशय यह नहीं है कि शत्रु के समान उनका हनन या हत्या की गई, अपितु उसमें निर्जरा का भाव है जिसका अर्थ है कि आत्मा पर से कर्म स्वयं झड़ गये जैसे कि शरीर पर से धूल झड़ जाती है। जब हत्या का भाव आ जायेगा तो वीतरागता कहां रह जायेगी ?

ब्रह्मचर्य का आशय भी मैथुन क्रिया में जीवों की हिंसा से बचने का नहीं है, उसका सीधा भाव तो समाज में शील-मर्यादा, अर्थात् काम सेवन में संयम, का प्रसार करना है। ऐसा प्रतीत होता है कि महावीर के समय में उनके सम्पर्क में आये प्रदेश में आज की सी दूरदर्शन पर प्रदर्शित मस्ती विज्ञापन की संस्कृति प्रकर्ष पर थी और इसीलिए समाज में व्यवस्था के लिए ब्रह्मचर्य के प्रति जागरूकता की आवश्यकता अनुभव की गई।

महावीर की साधना

महावीर की साधना के विषय में यह प्रवाद गढ़ लिया गया कि गृह-त्याग के बाद लगभग १२ वर्ष वह नग्न-अवस्था में विचरण कर तप-साधना में लीन रहे और इस प्रकार उन्हें समस्त मानवीय मर्यादाओं से परे, परम विवेक की स्थिति में स्थापित कर दिया गया जहां संयम-असंयम का भेद ही समाप्त हो जाता है। वास्तविकता यह है कि गृह-त्याग के बाद उन्होंने १२ वर्ष तक उस समय उपलब्ध **वेद-उपनिषद्** आदि सभी ग्रन्थों एवं अन्य साहित्य तथा प्रचलित विविध विचारों और मान्यताओं का गंभीर अध्ययन किया तथा सामाजिक दशा का प्रत्यक्ष सर्वेक्षण किया ताकि प्रचलित आडम्बर और कुरीतियों के विरुद्ध वह तर्क-सम्मत एवं सशक्त आवाज उठा सकें, जनमानस को उद्वेलित कर सकें और सामाजिक क्रान्ति को आगे बढ़ा सकें। महावीर के समकालिक बुद्ध ने भी इसी प्रकार अध्ययन-चिन्तन करके समाज को जागृत करने के लिए आवाज उठाई थी। और भी कई चिन्तक उस अभियान में लगे थे। महावीर

की साधना के इस वास्तविक पक्ष को उनके अनुयायियों ने बिल्कुल ही भुला दिया और उनके क्रान्तिकारी योगदान को नकार दिया।

श्वेताम्बर अनुश्रुति में प्रव्रज्या के पहले महावीर को एक सामान्य सद्गृहस्थ के रूप में चित्रित किया गया है। उनका विवाह हुआ और एक पुत्री भी हुई जिसका भी विवाह हुआ। प्रव्रज्या काल में भी उन पर उपसर्ग किये गये - उन्हें यातनायें दी गईं। केवल-ज्ञान प्राप्त कर लेने के बाद उन्होंने अपना प्रवचन गौतम गणधर के प्रश्नों के उत्तर के रूप में किया। इस प्रकार उनका व्यक्ति स्वरूप कायम रखा गया। परन्तु दिगम्बर अनुश्रुति में महावीर को अव्यक्तिक कर दिया गया - एक वैचारिक या सैद्धान्तिक चरम के रूप में पूज्य तो वह हो गये परन्तु उनका ऐतिहासिक व्यक्तित्व विलुप्त हो गया।

महावीर का क्रान्तिकारी सन्देश

अपने क्षेत्र और काल की समग्र परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में जन-जागरण का जो क्रान्तिकारी सन्देश महावीर ने दिया था, उसे निम्नवत प्रस्तुत किया जा सकता है -

१. महावीर ने किसी ग्रन्थ को, चाहे वह 'वेद' हो अथवा कोई अन्य वचन-समूह, अन्तिम सत्य एवं प्रमाण मान लेने से इंकार किया और कहा कि जो कुछ भी उपलब्ध ज्ञान है उस पर परिस्थितियों के सापेक्ष चिन्तन-मनन करके स्व-विवेक से अपना मत निश्चित करना चाहिये। इसीलिए वह 'निर्ग्रन्थ' कहलाये।

२. जन-साधारण की भाषा में विचार-संप्रेषण किया जाना चाहिए ताकि लोगों की समक्ष में बात आ सके और वे उस पर चिन्तन-मंथन-मनन कर सकें। अतः पाण्डित्य का एकाधिकार जतलाने वाली ब्रह्मणों की दुरुह संस्कृत को एक-तरफ करके महावीर ने अपना संभाषण जनता की बोली प्राकृत में किया।

३. आडम्बर पूर्ण कर्मकांड की अनुपयोगिता को स्पष्ट करने और उसके आश्रय में पल रहे ब्राह्मण वर्ग के दंभ, सामाजिक शोषण और निठल्लेपन का सम्यक् उत्तर देने के लिए महावीर ने श्रमणत्व का उद्घोष किया। 'श्रमण' से तीन अर्थ व्यंजित हैं - श्रम के द्वारा जीवकोपार्जन; समता भाव के द्वारा समाज में वर्ग, वर्ण और लिंग भेद जनित असमानताओं का निषेध; तथा मनुष्य की सहज पाशविक वृत्तियों का शमन ताकि समाज में संयमित मर्यादित आचरण व्यवस्थित किया जा सके।

वर्धमान महावीर की उपरोक्त विचारणा वस्तुनिष्ठ और तथ्य-सापेक्ष थी जो वस्तुतः एक समग्र सामाजिक क्रान्ति का उद्घोष था। इसका लक्ष्य एक प्रगतिशील,

व्यावहारिक और शान्ति एवं सामंजस्यपूर्ण मानव समाज के विकास की प्रेरणा देना था - जैसा कि आज के समाज-वैज्ञानिकों का भी चिन्तन है। उसमें परजीवी निठल्लों की जमात बढ़ाने और भ्रमजाल का पोषण करने वाले रहस्यवाद बनाम अध्यात्मवाद को बढ़ावा देने के लिए गुंजाइश नहीं है। आज जो कुछ उनके नाम से कहा और किया जा रहा है, यदि महावीर यह जानते तो स्वयं क्षुब्ध हो जाते।

महावीर का ऐतिहासिक अवदान

आज जो जैन धर्म है, ऐतिहासिक दृष्टि से उसके प्रवर्तक, उपदेशक और प्रतिपादक स्वयं महावीर ही थे। अनुश्रुति के अनुसार भी अब चौबीसवें तीर्थंकर महावीर का शासन है और वही उसके एकमात्र शास्ता हैं। अतः यदि आज प्रचलित 'जैन धर्म' का संस्थापक या प्रवर्तक महावीर को कहा जाता है तो वह ऐतिहासिक दृष्टि से तो सही है ही, तथाकथित आगमिक अनुश्रुति से भी समर्थित है। जैन धर्म के अनुयायियों को, यदि वे वास्तव में महावीर के अनुगामी हैं, महावीर के ऐतिहासिक व्यक्तित्व पर समुचित शोध और चिन्तन करना अभीष्ट है।

यहां यह उल्लेख किया जाना सुसंगत होगा कि इतिहास पुरुष के रुप में भगवान महावीर के व्यक्तित्व पर शोध और चिन्तन से इस मान्यता का कोई विरोध नहीं है कि जैनधर्म एक सर्वप्राचीन धार्मिक एवं दार्शनिक परम्परा है।

- ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ-२२६००४

जिनागम प्रवेश पुस्तक निःशुल्क

'अनेकान्त ग्रन्थमाला' से प्रकाशित ब्र. संदीप 'सरल' की कृति 'जिनागम प्रवेश' हिन्दी भाषा के अलावा गुजराती, मराठी एवं कन्नड़ भाषा में छप कर आ चुकी है। अंग्रेजी भाषा में भी छपकर शीघ्र आने वाली है। यह पुस्तक अनेक विद्यालयों, शिक्षण शिविरों, पाठशालाओं में पाठ्यक्रम में निर्धारित है। जो व्यक्ति अपनी पाठशाला अथवा शिक्षण शिविर में यह पुस्तक पढ़ाना चाहते हैं वे प्रबंधक, अनेकान्त ज्ञान मंदिर शोध संस्थान बीना (सागर), (म.प्र.) -४७०११३ (फोन ०७५८०-२२२२७६) से सम्पर्क करें। पुस्तकालयों, स्वाध्यायी श्रावकों के लिए पुस्तक निःशुल्क ज्ञानदान के रूप में प्रेषित की जा रही है। एक पोस्टकार्ड पर अपना पता लिखकर आर्डर भेज सकते हैं।

आचार्य कुन्दकुन्द के ग्रन्थों में सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र का पूर्वापर क्रम

- प्रो. सागरमल जैन

तत्वार्थ सूत्र में उमास्वामि ने उसके प्रथम अध्याय के प्रथम सूत्र में **"सम्यगदर्शन-ज्ञान-चारित्राणि-मोक्ष-मार्गः"** कह कर त्रिविध मोक्ष मार्ग का विवेचन किया है, किन्तु उसके पूर्व **उत्तराध्ययन सूत्र** में

णाणं च दंसणं चेव, चरित्तं च तवो तहा।
ऐस मग्गोति पण्णंतो, जिर्णेहिं वर दंसीहिं।।

कह कर ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप रूप चतुर्विध मोक्ष-मार्ग का उल्लेख है। बाद के आचार्यों ने तप का अन्तर्भाव चारित्र में करके त्रिविध मोक्ष-मार्ग को ही प्रमुखता दी है। वैसे जैन परम्परा में मोक्ष-मार्ग को लेकर विविध मान्यताएँ मिलती हैं। **सूत्रकृतांग** में **"विज्जा चरण पमोक्खो"** कहकर द्विविध मोक्ष-मार्ग का विवेचन भी किया गया है। इसमें ज्ञान और चारित्र को प्रमुखता दी गई है। सामान्यतया भी यह कहा जाता है कि-

"ज्ञान क्रियाभ्यां: मोक्षः"

अर्थात् ज्ञान और क्रिया से मोक्ष की प्राप्ति होती है। त्रिविध मोक्ष-मार्ग में दर्शन, ज्ञान और चारित्र इन तीनों तत्वों को प्रमुखता दी जाती है। **तत्वार्थसूत्र** और श्वेताम्बर आगम **समवायांग** में इस त्रिविध मोक्ष मार्ग का उल्लेख मिलता है। **तत्वार्थ सूत्र** के श्वेताम्बर और दिगम्बर टीकाकारों ने भी इसी त्रिविध मार्ग का विवेचन किया है। किन्तु श्वेताम्बर परम्परा में **उत्तराध्ययन** के २८वें अध्याय में और आचार्य कुन्द-कुन्द के **समयसार** नामक ग्रन्थों में इसी चतुर्विध मोक्ष-मार्ग का उल्लेख है। इसमें ज्ञान और दर्शन को तथा चारित्र और तप को एक-दूसरे से पृथक् कर चतुर्विध मोक्ष-मार्ग बताया है। यद्यपि तप चारित्र का ही एक विधायक रूप है। अन्यत्र ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार और वीर्याचार ऐसे पंचविध आचार मार्ग का भी मोक्ष-मार्ग के रूप में विवेचन मिलता है। इसमें तप और वीर्य को चारित्र से भिन्न बताया गया है। यद्यपि किसी अपेक्षा से वे चारित्र के ही विभाग हैं। प्रस्तुत आलेख में हमारा प्रतिपाद्य मोक्ष-मार्ग के इन विविध रूपों की विवेचना करना नहीं है, अपितु यह देखना है कि त्रिविध या चतुर्विध मोक्ष-मार्ग में ज्ञान, दर्शन, चारित्र एवं तप का क्रम क्या है। यद्यपि **तत्वार्थसूत्र** में सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र ऐसा ही क्रम रखा गया है, **उत्तराध्ययन** आदि श्वेताम्बर आगमों में दर्शन के स्थान पर ज्ञान को प्रमुखता देते हुए ज्ञान, दर्शन

और चारित्र ऐसा क्रम बताया है। यहाँ ज्ञान को दर्शन के पहले स्थान दिया है। **उत्तराध्ययन सूत्र** २८ में

णाणेण जाणइ भावे, दंसणेण य सद्दहे।
चरित्तेण णिगिण्हाइ, तवेण परिसुज्झइ।।

कह कर ज्ञान को प्राथमिकता दी गई है। इस प्रकार प्रश्न यह उठता है कि ज्ञान, दर्शन और चारित्र में मोक्षमार्ग की अपेक्षा से प्राथमिक स्थान किसका है। यद्यपि इस संदर्भ में मैंने विस्तार से चर्चा अपने शोध ग्रन्थ **'जैन, बौद्ध और गीता का साधना मार्ग'** में की है। प्रस्तुत आलेख में हम समग्र जैन साहित्य का इस दृष्टि से आलोड़न-विलोड़न न करके केवल आचार्य कुन्द-कुन्द के ग्रन्थों के आधार पर ही इस समस्या पर चर्चा करेंगे। यदि हम आचार्य कुन्द-कुन्द के **समयसार** को ही अपनी चर्चा का मुख्य आधार बनाकर देखें, तो हमें विभिन्न प्रकार के सन्दर्भ उपलब्ध हो जाते हैं। **समयसार** की गाथा क्रमांक १६, १७२, १८७, ३६६, ३६७, ३६८ में दर्शन को प्रथम स्थान देकर ज्ञान और चारित्र का क्रम उसके बाद दे रखा है। ज्ञान के क्रम को प्रधानता देने वाली गाथाओं में गाथा क्रमांक ७ का उतरार्द्ध तथा गाथा क्रमांक ३६९ है। इससे भी अधिक आश्चर्य की बात यह है कि चारित्र को प्रधानता देने वाली गाथाएँ भी उपलब्ध हैं। इसमें गाथा क्रमांक ७ के पूर्वार्द्ध तथा गाथा क्रमांक २ में चारित्र को प्रथम स्थान दिया गया है उसके बाद ज्ञान और दर्शन का स्थान रखा गया है। यहाँ प्रश्न यह उठता है कि इन विभिन्न प्रकार की अवधारणाओं में से किसको प्रामाणिक माना जाए। इस सन्दर्भ में कुछ शास्त्रीय आधार खोज कर ही विचार किया जा सकता है। सर्वप्रथम तो यह है कि आचार्य कुन्द-कुन्द ने **समयसार** में ज्ञान, दर्शन और चारित्र को आत्मा का स्वरूप बताया है। यदि ज्ञान, दर्शन और चारित्र आत्मा के ही स्वरूप हैं तो वे अपने अस्तित्व की अपेक्षा एक दूसरे से भिन्न नहीं हो सकते हैं। इसलिए आचार्य कुन्द-कुन्द ने तो कहा है कि दर्शन, ज्ञान और चारित्र आत्मा ही है। यदि दर्शन, ज्ञान, चारित्र आत्मा से अभिन्न हैं तो फिर उनके क्रम का कोई प्रश्न नहीं उठता है। क्रम की बात भिन्न तथ्यों के संदर्भ में ही की जा सकती है। जो आत्मा से अभिन्न हैं उनके क्रम की बात उठती ही नहीं है। वस्तुतः ज्ञान, दर्शन और चारित्र का युगपद रूप से कथन करना भाषा की सीमिता के कारण सम्भव नहीं है। ऐसी स्थिति में इनका क्रम सम्भव नहीं है तो फिर पूर्वापर क्रम का कोई प्रश्न उठता ही नहीं है। किन्तु कथन तो क्रम से ही होगा, लेकिन यदि ये तीनों आत्मस्वरूप हैं तो इनके क्रम का विचार ही निरर्थक है। क्रम केवल व्यावहारिक स्तर पर ही सम्भव है। यहाँ हमें यह भी स्पष्ट बोध हो जाना चाहिए कि ज्ञान और दर्शन तत्वतः अभिन्न हैं। अतः उनके क्रम की बात तभी सम्भव हो सकती है जब हम इस सम्बंध में स्पष्ट हो लें कि दर्शन शब्द का क्या अर्थ है। जैन परम्परा में 'दर्शन' शब्द अनुभूति, दृष्टिकोण,

तत्वश्रद्धान और देव, गुरु व धर्म की सम्यक् श्रद्धा इन अर्थों में प्रयुक्त होता रहा है। अतः दर्शन ज्ञान के पहले होगा या बाद में होगा, यह निर्णय इस बात पर आधारित होगा कि हम 'दर्शन' शब्द को किस अर्थ में ग्रहण कर रहे हैं। यदि 'दर्शन' शब्द का अर्थ हम अनुभूति या दृष्टिकोण लेते हैं तो निश्चय ही वह ज्ञान के पूर्व होगा, क्योंकि सम्यक् अनुभूति और सम्यक् दृष्टिकोण के बिना सम्यग्ज्ञान सम्भव ही नहीं है। किन्तु यदि हम 'दर्शन' शब्द का अर्थ तत्त्वश्रद्धान या देव, गुरु और धर्म के प्रति श्रद्धान करते हैं तो दर्शन का स्थान ज्ञान के बाद ही होगा। क्योंकि **उत्तराध्ययन सूत्र** में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि ज्ञान से जानें और दर्शन से श्रद्धा करें। क्योंकि यदि ज्ञान के पूर्व श्रद्धा की जाती है तो वह श्रद्धा या तो अन्ध श्रद्धा होगी या फिर उसमें स्थायित्व का अभाव होगा। जो श्रद्धा अनुभूति के बाद होती है वह श्रद्धा स्थायी या सुदृढ़ होती है। जहाँ तक चारित्र की प्राथमिकता का प्रश्न है, निश्चय ही जैन दर्शन यह मानता है कि बिना अनन्तानुबंधी कषाय के क्षय या उपशम हुए सम्यगदर्शन उत्पन्न ही नहीं हो सकता। अनन्तानुबंधी कषाय का क्षय, उपशम या क्षयोपशम किसी न किसी रूप में चारित्र शुद्धि का ही एक प्रयत्न है। अतः हम यह कह सकते हैं कि चारित्र शुद्धि से दर्शन और ज्ञान की शुद्धि होती है। इसलिए चारित्र का क्रम प्रथम हो जाएगा। आचार्य कुन्द-कुन्द ने **समयसार** की दूसरी एवं सातवीं गाथा के पूर्वार्द्ध में चारित्र को प्रथम स्थान दिया है, वह भी अनुचित नहीं है। वस्तुतः ज्ञान, दर्शन और चारित्र की शुद्धि समकालिक ही होती है। दसवें गुणस्थान के अन्त में सूक्ष्म लोभ के समाप्त होते ही व्यक्ति १२वें गुणस्थान में पहुँच जाता है। जहाँ समकाल में दर्शनावरण और ज्ञानावरण का क्षय कर वीतराग दशा की प्राप्ति हो जाती है। अतः कर्म-सिद्धान्त की अपेक्षा से भी चारित्र मोह के क्षय होने पर ज्ञानावरण और दर्शनावरण का समकाल में ही क्षय हो जाता है। इस दृष्टि से चारित्र को ही प्रधानता देना भी अनुचित नहीं है। चारित्रशुद्धि अर्थात् अनन्तानुबंधी कषाय के उपशान्त या निरसन होने पर ही सम्यग्दृष्टिकोण का विकास सम्भव है और सम्यग्दृष्टिकोण के विकास से ज्ञान सम्यग्ज्ञान बनता है। वस्तुतः अनुभूति (दर्शन), ज्ञान और आचरण (चरित्र) मानव व्यक्तित्व के महत्वपूर्ण अंग हैं। अतः ये परस्पर सापेक्ष हैं और इनकी विशुद्धि भी एक दूसरे से भिन्न-भिन्न नहीं होती है।

– निदेशक, प्राच्य विद्यापीठ

दुपाडा रोड, शाजापुर-४६५००१ (म.प्र.)

ROCK-CUT CAVE ARCHITECTURE OF THE JAINS IN ORISSA

- Shri Kailash Narayan Tandon
(retd. Principal, G. N. K. College, Kanpur)

Grunwedel rightly remarked that "the religious character so deeply rooted in the national life of Indian races has continued to be the guiding principle in their art". In fact, Hindus, Buddhists and Jains all sought the help of art to propagate their respective religious systems. Art served for them as a medium of religious propaganda. Such intimate relationship between religion and art has not been a peculiarity with the Indians alone, but as has been shown by Della Setta in her book "Religion and Art," nearly all ancient human races have used art primarily as a means to express their religious sentiments. It is difficult to deny that art has been responsible for giving real permanency to certain aspects of a particular religion at a particular time. The extant ancient monuments supply much material information regarding ancient religious practices and beliefs.

In India religious monuments consist mainly of rock-cut chambers, monasteries and chapels or temples.

Rock-cut architecture was popular mainly with the Jains and the Buddhists. First models of such architecture seem to have been furnished by Asoka, the great Maurya emperor of India, who excavated a few caves for the Ajivakas in the Barabar Hills in Bihar. Buddhist rock-cut architecture is found in abundance in western India, for example at Bhaja, Karle, Ajanta, Ellora etc.

Earliest of these Buddhist monuments may be dated back in *circa* Ist century A.D. The earliest specimens of Jain rock-cut architecture are to be found at Udaygiri and Khandargiri hills hear Bhubaneswar in Orissa. They may be dated from *circa* 2nd century B.C. to 2nd century A.D.

The rock-cut architecture of the Jains as also of the Buddhists consists of two classes of monuments, namely, retreats for the monks and nuns and chapels for the laity. The Jain monasteries are generally devoid of superflous ornamentation and present a very simple, sometimes even not

very pleasant, site. Chapels have, however, been found exuberantly adorned. The simple and sober appearance of the monasteries is in conformity with Jain emphasis on austerity (*tapas*) and asceticism. These monasteries were, in fact, meant to shelter the mortal and material body of the monks whose soul had already been floating in higher planes of spiritual phenomena. That's why Kharavela has referred to the caves he excavated for the residence of the monks as **Kayanisidiya** and still more appropriately as **Jivadehasayika** in his Hathigumpha Inscription. Etymologically **Kayanisidiya** or **Kayanishidya** means 'rest place for the material body' and **Jivadehasayika** or **Jivadehashrayika** also means 'shelter for the body which is the abode of the soul.'

Monks needed solitude to practise penances and yoga which were necessary for annulling the evil effects of the past Karmas and thereater for attaining Nirvana. In order to achieve their end they stayed in lonely places outside the busy centres of life and away from the hubbub of this troubled world. The lay devotees considered it their duty to excavate cells for the monks out of the living rock, wherever possible, or to provide some other shelter for their material body against the ravages of weather.

The earliest specimen of rock-cut chambers are simple cellular retreats. The workmanship of these excavations is not of a high order. They were excavated by the devoted Sravakas in the low hills near Bhubanesvara. The two tree-clad hills in which the rock-cut chambers are located are well known as Khandagiri and Udaygiri.

The number of chambers excavated in these hills is 35. They are both large and small. But only 17 of them are important and worth noticing. Udaygiri is noted for its 16 caves while Khandagiri for its one cave only. These chambers appear to have been excavated one after another as the necessity for the accomodation of the monks arose. A few chambers show definite improvement in style and technique when compared to others which shows that the activity of excavating cave-retreats must have continued for a sufficiently long period. There are also a few double storeyed caves. The workmanship and treatment of these excavations is though generally clumsy and crude but not devoid of grace. It may, however, indicate that these

excavations belong to the period which saw the beginning of the art of excavating Viharas in living rocks. Some scholars are of opinion that the clumsiness is due to the rough texture of the stone. The local name for these monasteries is **Gumpha,*ie.***, cave,

The pillars in these caves are quite plain in design except that they have been adorned with bracket capitals. We find a low- pedestalled wall carved like a continuous bench ll round inside certain apartments. There also appears a stone seat or **asana** on which the monks could sit to meditate. These **asanas** have a sloping back rest in some cases. Such a device appears for the first time in Indian rock-cut cave architecture.

The cells are mostly oblong in plan. The floor in each apartment is sloped so as to form a couch. It is remarkable that these cells are not very high. They are only 4 ft high which suggests that they were meant for meditation and rest only. Retreats consisting of a single cell in the Orissan group sometimes show primitive styles, *e. g.*, the Bagha Gumpha. The ingeniuous excavator has shaped the exterior of this cave like the mask of a tiger, the ante-chamber simulating his gaping mouth and the cell-door within, his gullet. The door jambs of this cave are adorned with winged creatures.

Rani Gumpha is the most important monastic retreat of the whole group. It is a double storeyed excavation. Cells in this retreat have been excavated on three sides of the courtyard, on its fourth side is the approach to the Gumpha. The general arrangement of the cells shows that they were meant for the residence of the monks. There are also a few cells which might have been used for some special purposes since they differ in shape and size from the general body of cwlls in that Gumpha. It is conjectured that they might have served as cloak rooms for keeping **Kamandalu** and **Pichhi**. The general plan of the Gumpha with a courtyard and terraces suggests that it should have been used as an open air theatre where the monks used to deliver sermons to the lay followers. The architectural treatment of this Gumpha is characteristic of the Orissan style of rock-cut architecture. The arches have been decorated in a very fine manner. Many single life-size figures have also been beautifully

sculptured. The device of figures depicted as doorkeepers **(dwara-pals)** is also interesting.

The other important monasteries of this group are Ganesha Gumpha, Manchapuri Gumpha and Ananta Gumpha. The Ganesha Gumpha is one of the earliest examples of the Orissan cave architecture.The scheme of sculptured animal guardians appears for the first time in this Gumpha. The pillars forming the facade fo this Gumpha are noted for their beautiful sculptural treatment. These are square in section above and below, but are octagonal in the middle.

Manchapurl Gumpha is important since an inscription of Nayanika the chief queen of King Kharavela of Kalinga has been found there. It thus provides an aid for studying the Orissan cave architecture chronologically.

The productions at Khandagiri are not so beautifully rendered as at Udaygiri. They do not show a very high standard of technique and workmanship. There we find either the earliest or the latest specimens, the former representing the state of evolution while the later, that of decadence.

The best examples of Orissan cave architecture are thus to be seen at Udaygiri. Udaygiri represents the culmination of Orissan cave architecture. This hill is all the more important from the point view of the political history of Orissa as well since it records the Hathigumpha Inscription, the only reliable source of infomation regarding Kharavela whose achievements make him stand in the galaxy of the greatest of Indian kings and heroes.

117/H-2/56, Pandu Nagar,
Kanpur- 208005

[Reproduced from The Jaina Antiquary (Arrah), Vol. XIX No. 2, (December, 1953) pp. 18-21]

आभार

श्री अवनीश गर्ग जैन, अग्रवाल बिल्डिंग, मकबरा, हजरतगंज, लखनऊ ने **शोधादर्श** को रु. २००/- तथा शोध पुस्तकालय को ब्र. विनोद सागर द्वारा संयोजित छह पुस्तकें भेंट की।

श्री लूणकरण नाहर जैन, राजेन्द्रनगर, लखनऊ ने शोध पुस्तकालय को श्री मधुकर मुनि द्वारा सम्पादित **'व्याख्यानप्रज्ञप्ति सूत्र'** भेंट किया।

स्वतंत्र नारी संघ और सवारी करने का औचित्य क्या है ?

- डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल (जैन)

जिनेश्वरी दीक्षा धारण कर आत्माराधकों को अपने दीक्षा-दाता आचार्य के मार्गदर्शन में आत्मसाधना करने की परम्परा निरंतररित है। दीक्षा-दाता आचार्य की स्वीकृति के बिना एकल विहार करना या अन्यथा अपने स्वतंत्र संघ का निर्माण करना श्रमण परम्परा/आगम के प्रतिकूल है। एकल विहार की चर्चा सर्वत्र हो रही है। उद्देश्य यदि आगमानुसार चर्या है तो विद्वानों का ध्यान निम्न बिन्दुओं की ओर आकर्षित कर रहा हूँ ताकि उनका सम्यक् समाधान प्राप्त हो सके-

१. दिगम्बर जैन परम्परा में स्वतंत्र आर्यिका संघ की कोई व्यवस्था नहीं है। आर्यिका-साधिकाएँ अपने दीक्षा-दाता आचार्य के संघ में पृथक् से आगमानुसार चर्या करती हैं। आचार्य की आज्ञा के बिना पृथक् या स्वतंत्र विहार भी वर्जित है। यदि आचार्य आज्ञानुसार वे स्वतंत्र-विहार भी करती हैं तब भी वे आचार्य के मार्गदर्शन एबं आज्ञानुसार अपनी चर्या करतीं हैं। संघ की परम्परा का उल्लंघन कर अपना स्वतंत्र संघ, निरंकुश- स्वेच्छाचारी संघ, स्थापित नहीं करतीं। वर्तमान में अनुभव में आया है कि कुछ गणिनी-आर्यिकाएं अपने गुरु-दीक्षा-संघ से सम्बन्ध विच्छेद कर निरंकुश जीवन चर्या में निमग्न हैं। उनका यह व्यवहार, आगमोक्त प्रायश्चित विधान एवं अन्य मर्यादित क्रियाएँ मूलाचार की विराधना का विषय बन गयी हैं। उनके इस स्वेच्छाचार से समाज और संस्कृति विकृत हो रही है। उनकी धर्म-चर्या नारि-स्तवन एवं धनार्जन का स्रोत बन गया है जबकि जैनागम में नारि-मुक्ति के साथ नारि-स्तवन भी निषिद्ध है। सम्मान/पुरस्कार के लोभ में कतिपय विद्वान भी उनके स्तवन करने से परहेज नहीं करते हैं। उनके स्वेच्छाचार से न केवल जैन संस्कृति, अपितु जैन समाज की सुरक्षा के लिए भी खतरा उत्पन्न हो सकता है। आचार्य भगवंतों से अनुरोध है कि वे समाज का मार्गदर्शन करें कि क्या गणिनी/आर्यिकागण अपना स्वतंत्र पृथक् संघ-आश्रम स्थापित/संचालित करने को अधिकृत हैं या उन्हें अपने दीक्षा-दाता आचार्य के संघ के मार्गदर्शन/आज्ञा में रहना चाहिये और उनके निर्णय को मान्य करना चहिये ? और क्या आर्यिका/गणिनी आचार्य-समूह के निर्णय के विरुद्ध अपना

संस्कृति विरोधी मत प्रचारित-प्रसारित करने को स्वतंत्र हैं ? ऐसे आगम विरुद्ध-मत का निराकरण किस प्रक्रिया से किया जाये ? इन बिन्दुओं पर मार्गदर्शन अपेक्षित है।

२. दिनांक ६ अगस्त, २००८ को आगरा में अ. भा. दिगम्बर जैन परिषद, दिल्ली, का राष्ट्रीय अधिवेशन था। वहाँ एक स्थानीय महानुभाव ने स्थानीय समाज की चर्चा की। पश्चात् मुनिचर्या पर व्यंगात्मक रूप से प्रश्न किया, "क्या जिनेश्वरी दीक्षा धारण कर डोलियों/कारों में विहार करना चाहिये?" मैंने कहा, "भाई आप यह प्रश्न क्यों पूछ रहे हैं ?" उन्होंने विस्मयपूर्वक कहा "अभी एक-दो वर्ष पूर्व यहाँ डोली में आर्यिका संघ आया था।" मुझे भी वर्ष २००४ में बड़गांव (नालंदा) में दो डोलियों को उठाकर ले जाते छह कहारों की स्मृति ताजा हो गयी जो राजगृही जा रहे थे। मैंने उनसे कहा, "भाई जिनदीक्षाधारी अहिंसा महाव्रत के धारी होते हैं और पाँच महाव्रत, पाँच समिति तथा तीन गुप्तियों का पालन करते हैं। उनका बिहार ईर्या समिति पूर्वक होता है ताकि किसी जीव की विराधना न हो जाये।" उस भाई ने कहा, ""क्या डोली उठाने वाले कहार भी ईया समिति पूर्वक चलता होगा? उनका व्यय कौन देता होगा ? दीक्षा धारियों के व्यवसाय तो नहीं होता, कहीं-न-कहीं समाज से धन आता ही होगा ?" मैंने देश काल के संदर्भ में उन्हें समझाया, किन्तु उनकी आपत्ति का समाधान उन्हें नहीं मिला। मैं भी विचलित था कि जिनेश्वरी पावन दीक्षा को किस प्रकार लोकापवाद का विषय बनाया जा रहा है और सभी मूक दर्शक बने हैं।

शंका के समाधान हेतु पू. आचार्य सूर्यसागर कृत **संयम प्रकाश पूर्वाद्ध-प्रथम भाग** का अवलोकन किया। उसके पृष्ठ २७३ पर 'सवारी में बैठना' शीर्षक के अन्तर्गत लिखा है-

"साधु जब अहिंसा मूलगुण धारण करता है तब मोटर, रेल आदि सब सवारियों का त्याग कर पाद-विहार अंगीकार करता है; क्योंकि चेतन या अचेतन वाहन पर सवार होकर चलने से मार्ग में वाहन के द्वारा हिंसा होती है, और उसका भागी सवारी करने वाला व्यक्ति ही होता है। साधु षटकाय के जीवों की हिंसा का त्याग करता है, अतः वह घोड़ा, ऊँट, घोड़ा-गाड़ी, डोली आदि चेतन या अचेतन सम्बन्धी सवारी तथा रेल, मोटर, आदि अचेतन सवारी पर नहीं बैठ सकता। यदि बैठता है तो उसके मूलगुणों का विनाश होने के कारण वह **मूलछेद प्रायश्चित्त** का भागी होता है, अर्थात् वह मुनि-पद से पतित हो जाता है, वह पुनः दीक्षा लेकर मुनि बनने का अधिकारी होता है। ध्यान रखने की बात है कि इस प्रकार स्वच्छंद प्रवृत्ति करने वाला व्यक्ति

प्रायश्चित लेकर भी फिर मुनि नहीं बन सकता क्योंकि प्रायश्चित से शुद्धि तो असमर्थता आदि के कारण किसी विशेष अवसर पर लगे हुए दोष की ही होती है। उच्छृंखलता या जानबूझ कर किये हुए की नहीं।" आगे यह भी लिखा हैं-

"यदि मुनियों को किसी प्रकार का रोग हो जावे, पैदल विहार करने की सामर्थ्य न हो तो किसी एक स्थान पर ठहर जाना चाहिये, रेलगाड़ी या मोटर में सवार होकर या पालकी में बैठकर ग्राम-ग्राम विहार करना आगम विरुद्ध है, इससे मुनि-धर्म पर लांछन लगता है। फिर मुनिधर्म-और श्रावक धर्म में विशेषता ही क्या रह जाती है? संयम धारकों की महिमा का ऐसे कुकृत्यों ने नाश कर दिया है।"

उपर्युक्त ग्रन्थ में दी गई व्यवस्था के अनुसार दीक्षाधारण कर चेतन या अचेतन वाहन पर सवारी करना उचित नहीं है और बार-बार ऐसा कृत्य करने वाला प्रायाश्चित के योग्य भी नहीं माना जाता। सत्य महाव्रत धारण करने वाले महामनाओं का इस व्यवस्था के प्रकाश में अपनी चर्या एवं भावों के फल का निर्णय स्वयं करना चाहिये। ऐसे कार्यों में जिनेश्वरी दीक्षा का अवमूल्यन होता है, समझकर आगमोक्त आचरण करना ज्ञानी-धर्मात्मा का कार्य है। उसे लोकापवाद का भी समाधान देना चाहिये। आचार्य भगवंत/विद्वज्जन मार्गदर्शन करें।

- बी-३६९, ओ. पी. एम., अमलाई,
जिला-शहडोल (म.प्र.) ४८४११७

शान्तिनाथ स्तवन

शान्तिजिनं शशि-निर्मल-वक्त्रं शील-गुण-व्रत-संयम-पात्रम्।
अष्टशतार्चित-लक्षण-गात्रं नौमि जिनोत्तममम्बुज-नेत्रम्।।१।।
पच्चमभीप्सित-चक्रधराणां पूजितमिन्द्र-नरेन्द्र-गणैश्च।
शान्तिकरं गण-शान्तिमभीप्सुः शोडष-तीर्थंकरं प्रणमामि।।२।।

जिनका मुख चन्द्रमा के समान निर्मल है, जो शील, गुण, व्रत और संयम के पात्र हैं, जिनका शरीर १०८ लक्षणों से युक्त है और जिनके नेत्र कमल के समान हैं उन शान्तिनाथ भगवान को मैं नमस्कार करता हूँ।।१।।

जो चक्रवर्तियों में पाँचवें चक्रवर्ती हैं, इन्द्र और नरेन्द्रों के समूह से पूजनीय हैं, संघ की शान्ति की इच्छा से मैं उन शान्ति करने वाले सोलहवें तीर्थंकर को नमस्कार करता हूँ।।२।।

यज्ञोपवीत का औचित्य

- श्री मूलचंद लुहाड़िया

यज्ञोपवीत एक चर्चित विषय है। यह कहा जाता है कि यज्ञोपवीत श्रावक का अनिवार्य चिन्ह है और इस चिन्ह को धारण किए बिना श्रावक को दान-पूजा का अधिकार नहीं है। इस विषय पर विचार करने के लिए हमें पहले यह जानना चाहिए कि यज्ञोपवीत का विधान किन-किन ग्रंथों में पाया जाता है और किस रूप में पाया जाता है। खोज के फलस्वरूप हम इस परिणाम पर पहुचते हैं कि उपलब्ध ३५ श्रावकाचारों में से **आदिपुराण** के अतिरिक्त और किसी भी श्रावकाचार ग्रंथ में यज्ञोपवीत का कोई वर्णन नहीं है। **सागार धर्मामृत** में अवश्य एक स्थान पर अध्याय १, श्लोक १६, में सामान्य वर्णन किया गया है कि "पूर्वोक्त अनंत संसार के कारणभूत मद्य पानादिक पापों को छोड़कर सम्यक्त्व के द्वारा विशुद्ध बुद्धि वाला और किया गया है यज्ञोपवीत संस्कार जिसका ऐसा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, जैन धर्म के सुनने का अधिकारी होता है।" इसी ग्रंथ में आगे श्लोक २२ में लिखा है "वेशभूषा, आचार-विचार और शरीर की शुद्धि से सहित शूद्र भी जैन धर्म सुनने का अधिकारी होता है।" यह निर्विवाद है कि शूद्र यज्ञोपवीत का अधिकारी नहीं है। अतः बिना यज्ञोपवीत के शूद्र भी जैन धर्म श्रवण करने का अधिकारी हो सकता है, ऐसे **सागार धर्मामृत** में परस्पर विरोधी कथन पाए जाने से उक्त श्लोक १६ में लिखी गई बात सन्देहास्पद हो गई और श्रावकों द्वारा यज्ञोपवीत धारण किये जाने के औचित्य पर निम्नवत विचार करने को बाध्य किया-

१. यज्ञोपवीत यदि श्रावक के दान-पूजा के अधिकार प्राप्त करने का एक अनिवार्य चिन्ह होता तो इस का विधान सभी श्रावकाचार के ग्रंथों में आवश्यक रूप से उपलब्ध होता। श्रावकाचार के आद्य प्रामाणिक ग्रंथ **रत्नकरंड श्रावकाचार** में दान का, पूजा का एवं श्रावक की ग्यारह प्रतिमाओं का विशद वर्णन होते हुए भी कहीं भी यज्ञोपवीत का विधान नहीं पाया जाता। **तत्वार्थ सूत्र** में श्रावक के बारह व्रतों का स्वरूप, अतिचार भावनाओं आदि का तथा दान का वर्णन तो किया गया है, किंतु व्रती के अनिवार्य चिन्ह यज्ञोपवीत का वर्णन नहीं किया गया। इसी प्रकार अन्य श्रावकाचार ग्रंथों में भी यज्ञोपवीत के अनिवार्य विधान एवं इनके बिना दान, पूजा के अधिकार न होने की बात तो दूर की बात है साधारणतया भी यज्ञोपवीत का वर्णन नहीं पाया जाता।

दिगम्बर जैन साहित्य में श्रावकाचार के जो ३५ ग्रंथ उपलब्ध हैं उनमें से केवल दो ग्रंथों में यज्ञोपवीत का वर्णन मिलता है। **सागार धर्मामृत** में यज्ञोपवीत के बारे में पूरे ग्रंथ में केवल एक श्लोक है। उसमें आगे के श्लोक से पूर्व में कही बात खंडित हो जाती है। यज्ञोपवीत का विस्तृत वर्णन केवल **आदिपुराण** में ही पाया जाता है। किंतु वहां भी भरत चक्रवर्ती ने एक चौथे नए ब्राह्मण वर्ण की स्थापना की है और उनकी पहचान के लिए यज्ञोपवीत का विधान किया है। यह पहचान मात्र के लिए की गयी एक सुविधामूलक व्यवस्था थी जो धीरे-धीरे रूढ़िपरक बन गई।

२. तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव ने तीन वर्णों की स्थापना की थी। उन्होंने व्रतियों का अलग वर्ण नहीं बनाया न उन व्रतियों के अनिवार्य चिन्ह स्वरूप यज्ञोपवीत का विधान किया। उन तीन वर्ण वाले व्यक्तियों में जो व्रती थे उनको एकत्र कर भरत ने ब्राह्मण वर्ण की स्थापना की और उन्हें पहिचान के चिन्ह स्वरूप यज्ञोपवीत प्रदान किया।

३. यज्ञोपवीत धारण करने के पूर्व भी व्रती व्यक्ति यज्ञोपवीत के बिना भी व्रतों की पालना करते हुए रह रहे थे और जिनेन्द्र पूजादि धार्मिक क्रियाएं कर रहे थे। अतः यज्ञोपवीत धारण करना व्रतों के लिए अथवा दान-पूजा के लिए अनिवार्य चिन्ह सिद्ध नहीं होता।

४. आदिपुराणकार ने यज्ञोपवीत का उपदेश तीर्थंकर भगवान के द्वारा नहीं कराया, क्योंकि तीर्थंकर भगवान ने ऐसा उपदेश दिया ही नहीं। अतः यज्ञोपवीत का विधान द्वादशांगवाणी का अंग नहीं है। ब्राह्मण वर्ण की स्थापना और उन्हें यज्ञोपवीत धारण कराने की व्यवस्था चक्रवर्ती भरत ने की, जो यद्यपि मनु होने के नाते सामाजिक व्यवस्था के लिए तो अधिकृत थे, किंतु उन्हें धार्मिक क्षेत्र में नई स्थापनाएं करने का अधिकार प्राप्त नहीं था।

५. बाह्य चिन्ह कभी भी अंतरंग परिणामों का नियामक रूप से सूचक नहीं होता है। यदि यज्ञोपवीत को अंतरंग व्रतों का नियामक रूप से सूचक मानेंगे तो यज्ञोपवीत की व्यवस्था से पहले व्रतियों का अस्तित्व कैसे रहा ? यज्ञोपवीत के बिना स्त्रियों में एवं तिर्यंचों में व्रतों का अस्तित्व कैसे रहता है? ये प्रश्न विचारणीय है।

६. अनेक प्रतिष्ठा पाठों में पूजकों को पूजन के समय यज्ञोपवीत धारण कराने का विधान पाया जाता है। वे पूजक पूर्व में ही मूल गुण अथवा व्रत धारण किए हुए रहते हैं। उन्हें पूजा के समय किन व्रतों के उपलक्ष में यज्ञोपवीत धारण कराई जाती

है, यह स्पष्ट नहीं है। संभवतः देवताओं के द्वारा मुकुट, कुंडल, माला, कंगन, बाजूबंद, कंडोरा, यज्ञोपवीत आदि आभूषण पहने जाते हैं, उन्हीं के अनुरूप मनुष्य भी जिनेन्द्र पूजा के समय वस्त्राभूषण पहन कर उत्साहपूर्वक पूजा करते हैं। यज्ञोपवीत एक आभूषण भी है।

७. कुंडलपुर क्षेत्र में यज्ञोपवीत पहने देवताओं की कुछ मूर्तियां जिनेन्द्र भगवान के सेवक के रूप में हैं। कुछ लोग उन मूर्तियों को यज्ञोपवीत की सिद्धि के रूप में प्रस्तुत करते हैं। हम यह सामान्य एवं सर्वमान्य सिद्धांत जानते हैं कि देवता व्रती नहीं होते और यज्ञोपवीत का व्रती के चिन्ह के रूप में उद्‌भव हुआ है। अतः जो यज्ञोपवीत वे देवता पहने हैं आभूषण ही हैं, व्रत-सूत्र नहीं है।

८. वास्तव में यज्ञोपवीत को व्रती श्रावक का अनिवार्य चिन्ह मानना और उसके बिना उसको दान-पूजा का अधिकार नहीं होने की बात न तो आगम सम्मत है और न ही तर्क सम्मत। तथापि यदि किसी व्यक्ति को यज्ञोपवीत पहनना रुचिकर लगता है तो वह पहने। यज्ञोपवीत पहनने से उसमें कोई अपात्रता नहीं आती और न उसके सम्यग्दर्शन का घात होता है। अतः यज्ञोपवीत का निषेध भी उचित नहीं है और न उसकी अनिवार्यता का उद्‌घोष करते हुए उसके अभाव में श्रावक को दान-पूजा के लिए अपात्र कहना ही उपयुक्त है। हम यज्ञोपवीत के पक्ष में अत्याग्रह को आगम के विधान पर हावी नहीं होने दें और समीचीन तर्क एवं अनुमान का सहारा लेते हुए आगम के आलोक में तत्व की खोज कर अपनी श्रद्धा को निर्मल बनाएं।

– जयपुर रोड, मदनगंज- किशनगढ़-३०५८०१

सामयिक परिदृश्य-

क्षणिकाएं

कोई पा रहा राजकीय अतिथि का दर्जा,
कोई पा रहा सबसे लम्बा ग्रीटिंग कार्ड।
हर सागर है आतुर बनने को महासागर,
कैसे बने गिनीज बुक में उसका रिकार्ड।।१।।

□ □ □ □

प्रचार-प्रबन्धन में प्रवीण हैं वीतरागी महाराज।
जिधर देखिये छपवा रहे अपना नाम आज।।२।।

– रमा कान्त जैन

तनाव या डिप्रेशन

- श्रीमती इन्दु कान्त जैन

आज कल कोई दिन ऐसा नहीं जाता कि समाचार में यह सुनाई न दे कि किसी व्यक्ति ने डिप्रेशन के कारण आत्म-हत्या कर ली है या फिर डिप्रेशन की वजह से अपने ही परिवार या किसी और की हत्या कर दी है। हत्या या आत्म-हत्या के कारणों के पीछे ज्यादातर तनाव व डिप्रेशन की बात ही सामने आती है, जो हमें यह सोचने पर मजबूर कर देती है कि आखिर हमारा समाज किस तरफ जा रहा है।

तनाव एक ऐसी महाबीमारी है जो समाज में इतनी तीव्रगति से फैल रही है कि हर दस व्यक्तियों में से एक व्यक्ति आज तनाव व डिप्रेशन का शिकार है। शुरू की अवस्था में व्यक्ति के व्यवहार में मामूली परिवर्तन आते हैं जैसे-अधिक काम के कारण या विपरीत परिस्थिति में व्यक्ति में झुंझलाहट, चिड़चिड़ापन, गुस्सा आना या कोई चीज उठाकर फेंक देना। बचपन में भी कुछ बच्चे शीघ्र क्रोधित होकर अपने साथियों या भाई-बहनों से छोटी-छोटी बातों पर झगड़ने लगते हैं या मार-पीट कर देते हैं। किन्तु तब इसे गम्भीरता से नहीं लेते हैं और थोड़ा-बहुत समझा-बुझाकर मामला शान्त कर देते हैं। यदि आपका बच्चा भी ऐसा व्यवहार कर रहा है तो उसकी गतिविधियों पर नज़र डालें कि वह ऐसा क्यों कर रहा है, उसे प्यार से बैठाकर उसके मन की बातें जानें और उसके अन्दर चल रही उलझनों को सुलझाने का प्रयास करें, क्योंकि बचपन की यही आदतें बड़े होने पर उग्र रूप धारण कर लेती हैं।

डिप्रेशन के कारणों का सर्वे करने पर पता चला कि तनाव व डिप्रेशन के कई कारण हैं। आज हमारी सामाजिक व्यवस्था ऐसी हो गई है कि एकाकी परिवार होते हैं और उनमें भी एक या दो बच्चे होते हैं। इसके कारण बच्चे अपने सुख-दुःख एक दूसरे से शेयर नहीं कर पाते हैं। उन्हें कोई भी चीज बांटकर लेना अच्छा नहीं लगता है। ऐसे में यदि उनके घर कोई आता है तो वे न तो जल्दी घुलमिल पाते हैं और न ही अपनी चीजें बांट पाते हैं। यदि कोई उनकी चीजें छू ले, तो वे क्रोध में भरकर मारपीट तक कर बैठते हैं।

यदि मा कामकाजी है तो ऐसा बच्चा और भी ज्यादा अकेला महसूस करता है। ऐसे बच्चे या तो एकदम शान्त हो जाते हैं या फिर अपना गुस्सा किसी न किसी तरह निकालने लगते हैं। इसका सबसे बड़ा कारण उसके बचपन का वह अकेलापन है, असुरक्षा का भय है। जो बचपन मा के आंचल में सुरक्षित होता है वह बच्चे को नहीं मिल पाता। स्कूल से घर आये बच्चे का जब मा मीठी मुस्कान के साथ स्वागत करती

है, उसकी पसन्द का खाना गर्म-गर्म उसे मनुहार करके खिलाती है तब बच्चा भी स्कूल की हर बात एक सांस में मा को बता देना चाहता है। उसका बाल मन रोज नयी जिज्ञासा और सैकड़ों सवालों को लेकर मा के सामने आ जाता है और मा बड़े प्यार से बच्चे के भोले-भाले प्रश्नों के उत्तर उसे दे देती है। तब बच्चे के कुंठित होने की सम्भावना नहीं होती। दूसरी तरफ कामकाजी मा के पास इतना समय ही कहा है कि वह बच्चों की बातें सुने और उत्तर दे। उसे तो यह सब फालतू की बकवास और समय बरबाद करने जैसा लगता है। बच्चा स्कूल से घर लौटता है तो बन्द दरवाजे और ठंडा खाना उसे मुह चिढ़ाते नज़र आते हैं। उसके बाल मन की जिज्ञासायें मन में रह जाती हैं। ठीक उसी प्रकार बच्चे को बचपन से ही जब कोई सही उत्तर नहीं मिलता तो उसका मस्तिष्क उलझता चला जाता है। ऐसे बच्चों पर गलत संगत भी जल्दी प्रभाव डालती है क्योंकि उन्हें सही-गलत का फर्क पता ही नहीं होता है। आज से १५-२० वर्ष पहले तक तो तनाव या डिप्रेशन जैसे शब्द सुनाई भी नहीं देते थे, किन्तु आज तो यह सामान्य बात है। छोटे-छोटे बच्चे भी पढ़ाई और प्रतियोगिताओं में प्रथम आने के प्रयास में डिप्रेशन का शिकार बनते जा रहे हैं। हर कोई कहता दिखता है कि आज तो कम्पटीशन का जमाना है। स्कूलों और स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा जगह-जगह प्रतियोगिताओं का आयोजन करवाया जाता है, किन्तु ये प्रतियोगिताएं बच्चों का विकास न करके उनमें प्रतिस्पर्द्धा की भावना पैदा कर रही हैं। इनसे बच्चों में क्रोध, घृणा, नफरत, ईर्ष्या जैसे भाव ज्यादा भर रहे हैं। कुछ बच्चे तो अपनी हार बर्दाश्त ही नहीं कर पाते वे जीतने के लिए गलत रास्ते अपनाते हैं या फिर जीतने वाले बच्चे को शारीरिक व मानसिक कष्ट पहुचाने का प्रयत्न करते हैं।

कुछ दिन पूर्व समाचार था कि आसाराम बापू जी के आश्रम के एक चौदह साल के बच्चे ने आश्रम के ही ४ और ५ वर्ष की उम्र के दो बच्चों की हत्या कर दी। आश्रम के कठोर नियमों से तंग आकर उसने आश्रम को बन्द करवाने के लिए ऐसा किया था। बाद में पता चला कि वह बच्चा तो आश्रम जाना ही नहीं चाहता था। उसे उसकी इच्छा के विरूद्ध उसके माता-पिता ने आश्रम भेजा था। यहा गलती उस बच्चे की नहीं बल्कि उसके माता-पिता की है। कई बार माता-पिता बच्चों से यह कहते सुनाई देते हैं कि "यदि हमारा कहना नहीं मानोगे, तो होस्टल भेज देंगे। वहा जाओगे तब पता चलेगा।" इस प्रकार की बातें करके बच्चों में होस्टल या गुरुकुल के प्रति भय उत्पन्न कर देते हैं। ऐसा बच्चा, जो किसी डर के साथ कहीं भेजा जाता है कितना भी अच्छा वातावरण क्यों न हो, वह उसके बारे में अपनी विचारधारा को बदल नहीं पाता है।

आश्रम, गुरुकुल या होस्टल की परम्परा हमारे देश में वर्षों पुरानी है। लाखों बच्चे वहां पढ़ने जाते हैं। कुछ बच्चे उसी वातावरण को प्रसन्नता के साथ अपनाते हैं और कुछ उसे कैद या बन्धन समझते हैं। ऐसे में बच्चा घर से दूर रहकर पढ़ाई क्या कर सकेगा जब उसे सजा के तौर पर वहां भेजा गया हो। वास्तव में बच्चे की विचारधारा का निर्माण उन्हीं बातों पर आधारित होता है जो उसके आस-पास के परिवेश में होती हैं।

कुछ समय पहले एक समाचार था कि गुड़गाव के एक स्कूल में एक बच्चे ने अपने साथी बच्चे को गोली मार दी। नन्हें मासूम बच्चों के मस्तिष्क में प्यार, दया, करुणा के स्थान पर क्रोध, घृणा और हिंसा पनप रही है। समाज और परिवार दोनों के लिए ही यह काफी दुखद परिस्थिति है। इन हिंसात्मक प्रवृत्तियों को बढ़ावा देने में वीडियो गेम या फिर मीडिया की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता । मीडिया को अपने दायित्व का ज्ञान होना चाहिए। हिंसात्मक कार्यक्रम दिखाये जाने पर रोक लगा देनी चाहिए। करोड़ों लोगों की मानसिकता को बदलने में जो भूमिका मीडिया निभा सकता है वह अन्य किसी प्रकार सम्भव नहीं है।

आज छोटे-छोटे बच्चों को ज्यादा से ज्यादा शिक्षा देने के प्रयास में उनके बैगों का वजन बढ़ता जा रहा है। बच्चों के पास खेलने या अन्य कार्यों के लिए समय ही नहीं है। वह पढ़ाई करते हुए उठते हैं और पढ़ते हुए सो जाते है। बच्चों को व्यावहारिक ज्ञान दिया जाना चाहिए। उनके खेल-कूद और मनोरंजन की व्यवस्था भी स्कूलों में होनी चाहिए। कुछ मिनट उन्हें व्यायाम भी करवाना चाहिए। आदर्श पुरुषों के व्यक्तित्व की जानकारी समय-समय पर दी जानी चाहिए। बच्चों के कोमल मन को आदर्शों से सुसंस्कृत करें।

तनाव व डिप्रेशन एक ऐसी मनः स्थिति है जिसमें दुःख का वेग इतना तीव्र हो जाता है कि मस्तिष्क चेतना शून्य हो जाता है। विवेक नष्ट हो जाता है। वास्तव में यह क्षणिक आवेग की अवस्था है। तब व्यक्ति उस दुखद परिस्थिति से छुटकारा पाने के लिए या तो खुद पर प्रहार कर लेता है या सामने वाले पर प्रहार कर देता है।

मैडीटेशन हमारे अन्दर परिस्थितियों से लड़ने की शक्ति प्रदान करता है। मन एकाग्र हो जाता है और समता धारण कर साक्षी भाव से सोचने-समझने की शक्ति प्रदान करता है। मैडीटेशन करने पर आपके अन्दर प्रतिस्पर्द्धा जैसे विचार आयेंगे ही नहीं। स्वस्थ वातावरण में निर्मित बच्चा ही स्वस्थ समाज का निर्माण कर सकेगा।

-२१, दुली मोहल्ला, फिरोजाबाद- २८३२०३

पं. बेचरदास जीवराज दोशी

११ अक्टूबर, १६८२ ई. को अहमदाबाद में ६३ वर्ष की वय में दिवंगत हुए प्रख्यात श्वेताम्बर जैन विद्वान पं. बेचरदास दोशी बीसवीं शती ईस्वी की उन विभूतियों में रहे जिन पर जैन समाज को ही नहीं देश को गर्व रहा है। उनका जन्म सौराष्ट्र के वल्लभीपुर में सन् १८८६ ई. में श्रीमाली वंशीय बीसा दोशी गोत्रीय विपन्न परिवार में हुआ था। उनके पिताजी का नाम जीवराज दोशी और माताजी का ओतम बाई था। दस वर्ष की वय में पिताजी का देहावसान हो गया। तब मा ने मेहनत मजदूरी करके घर खर्च चलाया। बालक बेचरदास भी उनके साथ उनका हाथ बटाने जाते। सन् १६०१ ई. में जब वह मात्र १२ वर्ष के बालक थे उनके भाग्य ने पलटा खाया। गुजरात के प्रसिद्ध जैन मुनि विजय धर्म सूरि की दृष्टि उन पर पड़ी और उन्होंने उनकी मेधा को परख उन्हें जैन दर्शन की शिक्षा हेतु चुन लिया और मंडल स्थित जैन पाठशाला में पढ़ने भेजा। तदनन्तर पालीताना और महेसन में उनके अध्ययन की व्यवस्था हुई। सन् १६०६ ई. में वह संस्कृत, प्राकृत और जैन दर्शन के विशद अध्ययन हेतु काशी यशोविजय जैन पाठशाला में पढ़ने गये। वहा उन्होंने कलकत्ता (कोलकाता) के संस्कृत कालेज की स्नातक परीक्षा उत्तीर्ण की। साथ ही वहा अध्ययनरत रहते हुए यशोविजय जैन ग्रन्थमाला के सम्पादन का भार भी सम्हाला। उस ग्रन्थमाला से प्रकाशित न्याय और व्याकरण विषयक ग्रन्थ कलकत्ता संस्कृत कालेज, जहा से उन्होंने १६१३ ई. में 'न्यायतीर्थ' और १६१४ ई. में 'व्यायकरणतीर्थ' परीक्षाएं उत्तीर्ण की थीं, के पाठयक्रम में भी सम्मिलित हुए। तदुपरान्त पालि भाषा और बौद्ध दर्शन का अध्ययन करने हेतु वह श्रीलंका गये।

सन् १६१५ ई. में महात्मा गांधी के विचारों से प्रभावित हो उन्होंने स्वदेशी वस्त्र पहनने का संकल्प लिया। उसी वर्ष सेठ पूजा भाई हीराचन्द द्वारा अहमदाबाद में स्थापित जिनागम प्रकाशन सभा से पं. बेचरदास जुड़े।

प्राचीन जैन साहित्य का अध्ययन-मनन कर उनके मन में संस्कृत-प्राकृत में निबद्ध जैन ग्रन्थों को सर्वजन हिताय सुगम बना देने की भावना बलवती हुई। उन्होंने उनके गुजराती अनुवाद की योजना बनाई और उसको प्रचारित किया। धर्मान्ध परम्परावादी जैन आचार्यों ने उनकी इस योजना का विरोध किया, किन्तु विरोध की

परवाह न कर उन्होंने **भगवती आगम** का सम्पादन, अनुवाद और प्रकाशन किया। सन् १६१६ ई. में उन्होंने बम्बई (मुम्बई) नगर में "जैन शास्त्रों के भ्रष्ट रूपान्तरों का समाज पर हानिकारक प्रभाव" विषय पर व्याख्यान दिये और उनमें धर्म के नाम पर चल रहे पाखण्ड का भाण्डाफोड़ किया। उन व्याख्यानों ने जैन समाज में हलचल मचा दी। श्वेताम्बर महन्त और आचार्य बौखला गये। उन्हें खतरनाक परम्पराघाती और नास्तिक नाम से गालियां दी गईं और श्वेताम्बर जैन संघ से बहिष्कृत कर दिया गया। किन्तु पं. बेचरदास अडिग रहे, उन्होंने हार नहीं मानी। अनेक युवक और विचारक उनके प्रशंसक बन गये। अनेक ने उनके व्याख्यानों से प्रेरणा ग्रहण की।

सन् १६२१ ई. में पं. बेचरदास जी ने गांधी जी द्वारा स्थापित पुरातत्व मंदिर गुजरात विघापीठ में अध्यापन कार्य आरम्भ किया। वहा काका कालेलकर, जे.बी. कृपलानी, किशोरीलाल मशरूवाला और मुनि जिनविजय जी के सान्निध्य ने उन्हें क्रान्ति दृष्टा बना दिया। उन्हीं दिनों प्रज्ञाचक्षु पं. सुखलाल संघवी के साथ मिलकर आचार्य सिद्धसेन दिवाकर (छठी शती ईस्वी) के न्याय विषय के प्रसिद्ध ग्रन्थ **'सन्मति तर्क'** का गुजराती में अनुवाद और अंग्रेजी में प्रस्तावना सहित ऐसा सुसम्पादित संस्करण तैयार किया कि उसे देखकर पं. नाथूराम प्रेमी के मन में प्रभाचन्द्र (६८०-१०६५ ई.) विरचित **'न्यायकुमुदचन्द्र'** का वैसा ही सर्वांगीण सम्पादन किसी होनहार, सुलझे विचारों वाले दिगम्बर आम्नायी जैन विद्वान से करा लेने की लालसा बलवती हुई।

गांधी जी द्वारा 'डांडी मार्च' आरम्भ किये जाने पर पं. बेचरदास ने उनके आग्रह पर **'नव जीवन'** पत्र का सम्पादन सम्हाला। वह गिरफ्तार हुए और ६ माह तक जेल में बन्द रहे। जेल से छूट जाने पर भी सन् १६३६ ई. तक ब्रिटिश राज्य में प्रवेश करने हेतु उन पर प्रतिबन्ध लगा रहा और कांग्रेस की सरकार बनने पर ही वह गुजरात वापस आ सके। उस अवधि में ४-५ वर्ष काफी आर्थिक संकट का सामना करना पड़ा।

सन् १६३८ ई. में अहमदाबाद में एल.डी. आर्ट्स कालेज की स्थापना होने पर पं. बेचरदास वहाँ अर्धभागधी प्राकृत भाषा के लेक्चरर नियुक्त हुए और वहा से सेवानिवृत्त होने पर अहमदाबाद के एल.डी. इन्स्टीट्यूट ऑफ इण्डोलॉजी में मानद संशोधक विद्वान बने। सन् १६४० ई. में बम्बई विश्वविद्यालय के तत्वावधान में गुजराती भाषा के विकास पर हुई व्याख्यान माला से विद्वज्जगत में उन्होंने पर्याप्त यश अर्जित किया। पं. बेचरदास जी को लगभग ५० महत्वपूर्ण कृतियों के सृजन-सम्पादन का श्रेय रहा। उनकी विद्वत्ता के कारण सन् १६६३ ई. में राष्ट्रपति डॉ. राधाकृष्णन

ने पंडित जी को संस्कृत के विशिष्ट विद्वान के रूप में सम्मानित किया और केन्द्र सरकार द्वारा उन्हें रू. ३,०००/- वार्षिक की पेन्शन स्वीकृत हुई। सन् १९७४ ई. में एक दिगम्बर जैन संस्था वीर निर्वाण भारती ने भी पंडित जी को रू. २,५००/- का नकद पुरस्कार प्रदान कर उनका अभिनन्दन किया।

इस वर्ष ११ अक्टूबर को पं. बेचरदास जी की २६वीं पुण्यतिथि है। उस अवसर पर इस यशस्वी विद्वान को हमारा भी सादर नमन् है।

-रमा कान्त जैन

तमिलनाडु के विल्लुपुरम जिले में प्राचीन जैन स्थल

- श्री सन्दीप कान्त जैन

अंग्रेजी दैनिक 'दि हिन्दु' २० जून '२००८ और ८ अगस्त' २००८ के अंकों में श्री टी. एस. सुब्रमण्यन द्वारा प्रकाशित समाचारों से तमिलनाडु में अभी हाल में प्रकाश में आये कतिपय प्राचीन जैन स्थलों की जानकारी प्राप्त हुई, जो निम्नवत है:

इस वर्ष पुरातत्वविदों का एक दल, जिसमें कला इतिहास विशेषज्ञ श्री के.टी. गान्धीराजन और पुरातत्व शोधकर्ता श्री टी. रमेश सम्मिलित थे, जब तमिलनाडु के विल्लुपुरम जिले में जिंजी किले के पीछे की पहाड़ियों का सर्वेक्षण कर रहा था तब उसे पहली जून को जिंजी तालुक में वडगल ग्राम के निकट 'पंच पांडवर कल' नामक पहाड़ी पर एक बड़ी गुफा में फर्श पर बनाई गई कई शय्याएं और उनके सम्मुख शिलापट्ट पर कई प्राग्-ऐतिहासिक चित्र दिखायी पड़े। वह पहाड़ी जिंजी किले के पीछे १५ कि. मी. की दूरी पर अवस्थित है और उस क्षेत्र में फैली पर्वत श्रृंखला का एक अंश है। दल के सदस्यों का कहना है कि उक्त स्थल पर जैन साधुओं के निमित्त बनाई गई शय्याओं का पाया जाना इस धारणा को पुष्ट करता है कि वर्तमान विल्लुपुरम जिला किसी समय जैन धर्म का महत्वपूर्ण केन्द्र रहा था। उन्होंने यह भी कहा कि शिला-शिल्प और शय्याओं की उपस्थिति सूचित करती है कि वह क्षेत्र विगत ३००० वर्षों से निरन्तर आबाद रहा है।

श्री गांधीराजन ने बताया "ये शय्याएं आदिम अवस्था की हैं, पूर्णतः विकसित नहीं हैं और लगभग २००० वर्ष प्राचीन हैं। शय्याओं के एक सिरे पर शिलातल को काट कर ऊपर उठे हुए तकिये लगाये गये हैं और वर्षा के जल को निसृत करने के लिये नालियां काटी गई हैं अथवा वर्षा-जल संचित करने के लिये फर्श खोदा गया है।"

शिला-शिल्प में ३' x ३' आकार का हरिण का एक चित्र है जो खड़िया से खिचित है और उसकी बाह्य रूपरेखा गेरूए रंग से रंगी है। उसके समीपवर्ती शिलातल पर, उनके आकार की भिन्नता को प्रदर्शित करने के लिये, हरिण और छिपकली के छोटे रेखाचित्र बने हैं। श्री गांधीराजन ने कहा ये चित्र प्राग्-ऐतिहासिक युग के शिकारियों द्वारा बनाये गये हैं जो उस गुफा में रहा करते थे। कालान्तर में उस गुफा का उपयोग जैन मुनियों द्वारा किया जाने लगा।

उससे पहले उस दल ने जिंजी किले से लगभग १५ कि. मी. दूर तिरुकोविलुर के मार्ग पर देवदानमपेट्टइ के निकट एक पहाड़ी पर लगभग एक दर्जन चट्टान में सुराख कर बनायी गई गुफाएं पायी। उन गुफाओं में से कुछ गुफाएं ही समूची मिली हैं।

जिंजी से २८ कि.मी. दूर कांचीयुर ग्राम के निकट एक पहाड़ी पर जैन साधुओं के निमित्त बनाई गई ११ शय्याएं भी मिली हैं।

उलुण्डुरपेट के निकट तिरुनरुंगकोण्डै, परैयनपट्टु और मेलकुडलूर में भी जैन साधुओं के निमित्त निर्मित शय्याएं पायी गई हैं। तिरुनरुंगकोण्डै, मेलसित्तामूर और टिण्डीवनम के निकट तोण्डूर तथा तिरुवन्नमलै के निकट मेलमलयनूर में जैन मंदिरों के अवशेष भी मिले हैं। ये सभी स्थल विल्लुपुरम जिले में अवस्थित हैं।

सिरुकदम्बूर में पहाड़ी पर २४ जैन तीर्थंकरों का एक उकेरा हुआ पट्ट-चित्र और उसके सन्निकट समाधि-मरण करने वाले एक जैन मुनि के बारे में एक शिलालेख भी है। वह लेख तमिल-ब्राह्मी लिपि से वत्तेलुतु लिपि के सक्रमणकाल का है।

पनैपदी ग्राम में भी झील के किनारे मरिअम्मन मंदिर के सम्मुख एक गोल बड़ी शिला की सतह पर उत्कीर्ण भगवान महावीर का मनोरम पट्ट-चित्र मिला है जिसमें वह ध्यान मुद्रा में आसीन चित्रित हैं और उनके शीश पर त्रि-छत्र प्रदर्शित हैं। उनके केश घुंघराले हैं और कर्ण छिदे हैं। उनके शीश के चतुर्दिक् अर्धवृत्ताकार प्रभामण्डल है। दोनों ओर इठलाते हुए सिंह उत्कीर्ण हैं जो पादपीठ को सुशोभित किये हैं। साथ ही एक ओर एक यक्ष और दूसरी ओर एक यक्षिणी अपने हाथ में चंवर लिये है। यह शिल्प तमिलनाडु के पुरातत्व विभाग के पुरालेखविद श्री आर. शिवनन्दम के अनुसार चोल काल का है और लगभग १० वीं शती ईस्वी का है।

पनैपदी से लगभग २.५ कि.मी. दूर चोलपन्दीपुरम ग्राम १० वीं शती ईस्वी में जैन केन्द्र था। समीपवर्ती पहाड़ी अन्दीमलै पर आदिनाथ, पार्श्वनाथ, गोम्मटेश्वर,

महावीर और पद्मावती के चित्र उत्कीर्ण हैं तथा जैन साधुओं के निमित्त चट्टान से काटी गई २० शय्याएं हैं। चोलपन्दीपुरम में प्राप्त एक शिलालेख के अनुसार ये चित्र सेलवल कोंकरैयर पुद्घडिगल द्वारा उत्कीर्ण कराये गये थे। एक अन्य पद्यात्मक अभिलेख में कहा गया है कि एक स्थानीय सरदार सिद्धवदवन अपरनाम सेतिरायन ने पनैपदी ग्राम चोल राजा कन्दरादित्य के राज्यकाल के दूसरे वर्ष (९५२ ई.) में इन जैन तीर्थंकरों की पूजा के लिये दान में दिया था। चूंकि पनैपदी में, उक्त अभिलेख में जैसा उल्लिखित है, अब अन्य जैन अवशेष उपलब्ध नहीं है, महावीर के इस सुन्दर उत्कीर्ण शिला पट्ट का प्राप्त होना महत्वपूर्ण है।

विल्लुपुरम जिले में प्राप्त ये समस्त अवशेष यह इंगित करते हैं कि किसी समय यह क्षेत्र जैन धर्म का एक महत्वपूर्ण केन्द्र था।

–ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ

परम अहिंसा धर्म

परम अहिंसा धर्म।
मान कीजिये कर्म।
यही मनुज का धर्म।।१।।

धर्म कर्म का मर्म।
कभी न होना गर्म।
नहीं नर्म में शर्म।।२।।

जीवन के दिन चार।
करके यही विचार।
सब से करिये प्यार।।३।।

रोगों का प्रतिकार,
यदि करना स्वीकार।
करें न मांसाहार।।४।।

विद्या अति अनिवार्य।
इसके बिना न कार्य।
कहते सब आचार्य।।५।।

श्रम पूजा प्रतिमान।
इसका उच्चस्थान।
है यह ज्ञान महान।।६।।

महावीर भगवान।
करें ज्ञान का दान।
रखें भक्त का मान।।७।।

हैं सब मनुज समान।
तू 'अबोध'! नादान।
इनमें भेद न मान।।८।।

–श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध',
'चन्द्रामण्डप',
सआदतगंज, लखनऊ

श्रीपाल चरित

श्रीपाल-मैनासुन्दरी की कथा को जैन समाज में प्रायः वही लोकप्रियता प्राप्त है जो वैष्णव समाज में राम-कथा और कृष्ण-लीला को प्राप्त है। प्रत्येक प्राणी को अपने पूर्व कृत कर्मों का शुभ-अशुभ परिणाम भोगना पड़ता है, किन्तु वह अपने सद्प्रयत्न से अशुभ को शुभ में परिणत करने में सफल भी हो जाता है। भाग्य और पुरुषार्थ का यह समन्वय जैन कर्म सिद्धान्त का हार्द है। पूर्व कृत अशुभ कर्मों के फलस्वरूप किस प्रकार चम्पा का सुन्दर नौजवान राजकुमार श्रीपाल अकस्मात अपने ७०० सुभट सैनिकों सहित दुर्गन्ध से परिपूर्ण कुष्ठरोग का शिकार हो अपने राज्य से ही निष्कासित कर दिया गया; क्यों अवन्ति की राजकुमारी मैनासुन्दरी को अपने पिता की तदबीर से अधिक अपनी तकदीर को तरजीह देने के कारण पिता का कोपभाजन बन कोढ़ी श्रीपाल से विवाह करना पड़ा; किन्तु उस दुर्भाग्य का समतापूर्वक सामना कर कैसे सती मैनासुन्दरी ने धर्म का आश्रय ले और अपने गुरु की प्रेरणा से सिद्धचक्र विधान सम्पन्न कराकर अपने पति और उसके साथियों को कुष्ठरोग से मुक्त कराया; तदनन्तर घर जंवाई बने रहने के लांछन से बचने हेतु श्रीपाल ने विदेशों में जाकर कैसे अपने पुरुषार्थ और बुद्धिबल के आधार पर अपना जीवन प्रशस्त किया और अनेक दुख-सुख भोगे, यही संक्षेप में श्रीपाल-मैनासुन्दरी की कथा है। इस कथानक पर दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों ही आम्नायों के सारस्वतों द्वारा विविध विधाओं में संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश और हिन्दी व गुजराती आदि आधुनिक भारतीय भाषाओं में प्रभूत साहित्य प्रसूत किया गया है।

पुणे से सन् १९४४ ई. में प्रकाशित **'जिनरत्नकोश'** में श्रीपालचरित नाम से तीस से अधिक रचनाओं का निर्देश है जिनमें से अधिकांश श्वेताम्बर ग्रन्थकारों की हैं। उक्त कोश में **'सिद्धचक्रमाहात्म्य'** नाम से भी कुछ ग्रन्थों का निर्देश है जो प्रायः श्रीपालचरित ही हैं। दिगम्बर आम्नाय में सकलकीर्ति, ब्रह्म नेमिदत्त, विद्यानन्दि भट्टारक और शुभचन्द्र द्वारा संस्कृत भाषा में **श्रीपालचरित** की रचना किये जाने का उल्लेख मिलता है। ब्रह्म नेमिदत्त की रचना वि.सं. १५८५ (१५२८ ई.) की है।

रत्नशेखर सूरि कृत **'श्रीपालचरित'** अपरनाम **'सिद्धचक्रमाहात्म्य'** प्राकृत भाषा में निबद्ध इस कथानक पर पहली रचना मानी जाती है। १३४२ गाथाओं में निबद्ध इस चरित को हेमचन्द्र साधु ने वि.सं. १४२८ (१३७१ ई.) में लिपिबद्ध किया था। अपभ्रंश भाषा में **'सिरिवाल चरिउ'** का प्रणयन महाकवि रइधु (१३६३-१४७६ ई.) और कवि नरसेनदेव (१५वीं-१६वीं शती ईस्वी) द्वारा किया गया। गुजराती भाषा में वि.सं. १५३१ (१४७४ ई.) में ज्ञानसागर द्वारा **'सिद्धचक्ररासा'** अपरनाम **'श्रीपाल रास'**, एक अन्य ज्ञानसागर द्वारा वि.सं. १७२६ (१६६९ ई.) में **'श्रीपाल रास'**, कवि विनय विजय गणि द्वारा वि.सं. १७३८ (१६८१ ई.) में चार खण्ड और ४१ ढालों में निबद्ध **'श्रीपाल रास'**, जो **'प्राकृत प्रबन्ध'** पर आधारित है, तथा जिनहर्ष द्वारा वि.सं. १७४० (१६८३ ई.) में **'श्रीपाल रास'** की रचना किये जाने का उल्लेख मिलता है। पं. नाथूराम प्रेमी ने भट्टारक वादिचन्द्र द्वारा वि.सं. १६५१ (१५९४ ई.) में गुजराती मिश्रित हिन्दी में भी **'श्रीपाल आख्यान'** की रचना किये जाने का उल्लेख किया है। उसी वर्ष आगरा में मुगल बादशाह अकबर के राज्यकाल में कवि परिमल ने हिन्दी भाषा में अपना **'श्रीपाल-चरित्र'** पूर्ण किया था जो सन् १६०४ ई. में लाहौर से प्रकाशित हुआ। डॉ. देवेन्द्र कुमार जैन ने कवि नरसेनदेव के **'सिरिवाल चरिउ'** का सम्पादन करते हुए अपनी प्रस्तावना में १५९४ ई. में ही भ. वादिचन्द्र और कवि परिमल्ल द्वारा पूर्ण की गई रचनाओं का आधार ब्रह्म नेमिदत्त द्वारा संस्कृत में रचित **'श्रीपाल चरित'** अनुमानित किया है। कवि परिमल्ल का **'श्रीपाल चरित्र'** दिगम्बर समाज में अधिक प्रचलन प्राप्त है। पं. दीपचन्द्र वर्णी और सिंघई परमानन्द ने उक्त कृति का पुनर्संस्करण किया। इसी कड़ी में इटावा के हेमराज द्वारा वि.सं. १७३८ (१६८१ ई.) में चौपाई बन्ध में हिन्दी भाषा कथा और खण्डेलवाल पं. नाथूलाल दोशी द्वारा हिन्दी-भाषा-वचनिका लिखे जाने का उल्लेख भी प्राप्त होता है। विश्वभूषण रचित **'अढ़ाईव्रत'** और भ. कनककीर्ति रचित **'अष्टान्हिका सर्वतोभद्र'** भी इसी विषय से सम्बन्धित कृतियां मानी जाती हैं। 'सिद्धचक्रविधान' को 'नवपद मण्डल विधान' के नाम से भी अभिहित किया जाता है।

अपने बाल्यकाल में सन् १६४७ ई. के लगभग मैंने अपने घर में हिसार के मुंशी न्यामत सिंह द्वारा रचित और १६१३ ई. में प्रकाशित **'मैनासुन्दरी नाटक'** का वाचन होते सुना था। वह तत्समय जैन समाज में हिन्दी भाषी क्षेत्र में बहुप्रचलित था। इसी कड़ी में श्री राजबहादुर जैन द्वारा प्रणीत अभिनव कृति **'मैनासुन्दरी'** उपन्यास का परिचय आगे 'साहित्य-सत्कार' के अन्तर्गत प्रस्तुत है। इस प्रकार हम देखते हैं कि मध्यकाल में किन्हीं कारणों से प्रचार को प्राप्त श्रीपाल-मैनासुन्दरी की कथा आज तक लोकप्रियता को प्राप्त है।

- रमा कान्त जैन

प्रभु वीर बिना तेरा ध्यान कहाँ

क्यों भव भव यों ही भटकता यहाँ, प्रभु वीर बिना तेरा ध्यान कहाँ।
क्यों लाख चौरासी में अटका यहाँ, महावीर बिना तेरा ध्यान कहाँ।।१।।

तुझे दौलत ने भरमाया है, विषयों ने तुझे सताया है।
काम क्रोध की अग्नि में जलकर, यह जीवन व्यर्थ गँवाया है।
तूने पापों की गठरी बांधी यहाँ, महावीर बिना तेरा ध्यान कहाँ।।२।।

दुखियों का दर्द मिटाया नहीं, गिरतों को कभी उठाया नहीं।
तूंने मायावी बातें करके, जीवन को मधुर बनाया नहीं।
जरा सोच क्या होगा आगे वहाँ, महावीर बिना तेरा ध्यान कहाँ।।३।।

तूं जंगल-जंगल ढूंढ़ रहा, मन्दिर में भी प्रभु खोज रहा।
प्रभू रहते अन्दर में तेरे, तूं उनको क्यों नहीं देख रहा।।
तूं मन की आँखे खोल यहाँ, महावीर बिना तेरा ध्यान कहाँ।।४।।

प्रभु भक्ति में मन तेरा लगता नहीं, जिनवाणी सुनने को वक्त नहीं।
दुर्लभ मानव भव मिला यहाँ, क्यों खोता मूरख व्यर्थ यहाँ।।
'नाहर' प्रभु चरणों में नम तूं यहाँ, महावीर बिना तेरा ध्यान कहाँ।।५।।

- श्री लूणकरण नाहर जैन
५१४, राजेन्द्र नगर, लखनऊ

दीपावलि गीत

घर के दीप जलायें ऐसे,
प्रतिवेशी के होय उजाला।।

महावीर जी आज सिधारे,
शोभित हैं सिद्धालय-द्वारे,
ज्ञान-दीप फैले अग-जग में, शान्त होय धधकती ज्वाला।
घर-के दीप जलायें ऐसे, प्रतिवेशी के होय उजाला।।१।।

करें साफ निज घर और द्वारे,
मिलें परस्पर, विहँसे सारे,
खायें हिल-मिल खील बताशे, खुले त्वरन्त बुद्धि का ताला।
घर-के दीप जलायें ऐसे, प्रतिबेशी के होय उजाला।।२।।

छज्जे पर कण्डील दीखते,
बच्चे मिलकर सीख सीखते,
धनी चौकसी हर प्रानी पर, पीता नज़र न आये प्याला।
घर के दीप जलायें ऐसे, प्रतिवेशी के होय उजाला।।३।।

खुशियां घर-घर सभी मनायें,
मुक्ति हेतु सब मंगल गायें,
आतंकी सारे अकुलायें, रहें सतर्क, स्वयं रखवाला।
घर के दीप जलायें ऐसे, प्रतिवेशी के होय उजाला।।४।।

शीश झुकायें श्री जिनेश को,
पूजें लक्ष्मी औ गनेश को,
गायें गीत बजें मंजीरे, थिरक उठा पग घुंघरूवाला।
घर के दीप जलायें ऐसे, प्रतिवेशी के होय उजाला।।५।।

- विद्यावारिधि डॉ. महेन्द्रसागर प्रचंडिया
मंगल कलश, सर्वोदय नगर, अलीगढ़

कर्म सिद्धान्त का रहस्य

- श्री केवलचंद जैन

प्राणिमात्र की जीवन व्यवस्था व समस्या कर्म सिद्धान्त पर आधारित है, जन्म-मरण, सुख-दुःख सभी कर्माधीन हैं, इसीलिये कहा गया है-

सुख दुःख आ जगत मां कोउ नहीं दाता।
निजकृत कर्म भोगत सब भ्राता।

प्रत्येक जीव के साथ पुण्य व पाप रूपी शुभ-अशुभ कर्मों के संस्कार लगे रहते हैं जो 'कर्मबद्ध' कहलाता है व समय आने पर उसका परिणाम सुख अथवा दुःख, अनुकूल या प्रतिकूल जो परिस्थिति बनती है उसका फल अवश्यमेव भुगतना होता है। जब तक जीवात्मा का पुण्य बल होता है, पाप दबा रहता है, परन्तु ज्यों ही पुण्य क्षीण होता है पाप का उदय काल कष्टकारक लगता है, अतः पुण्य के उदय काल में सुख में लीन होकर भान नहीं भूलना चाहिये बल्कि सचेत रहने की आवश्यकता है। कहा गया है- **जब तक जिनके पुण्य का पहुंचे नहीं करार।**
तब तक उसे साफ है गुनाह करे हजार।।

परन्तु साथ में यह भी नहीं भूलना है कि पाप का फल भी यथावत भुगतना पड़ेगा। कहते हैं पाप का घड़ा अवश्य फूटता है। जितना देरी से फूटता है मार उतनी ही ज्यादा पड़ती है, जैसे किसी के पुण्य काल में यदि कोई ऊपर उठता ही जाता है तो नतीजा यह होगा कि जब पुण्य क्षीण होकर पाप का उदय होगा तब वह जितने ऊपर से गिरेगा, मार उतनी ही ज्यादा लगेगी, यही कुदरत का नियम हैं। कुदरत सदा न्याय करती है। जिसका कद अधिक बढ़ जाता है उसे काट दिया जाता है। कर्म सिद्धान्त कुदरत के कानून की किताब है जैसे कम्प्यूटर में जो फीड किया जाता है उसी की फ्लोपी बन जाती है। जब जैसा बोया जाता है समय आने पर उसी का फल प्राप्त होता रहता है। जैसे पुण्य काल में दुःख नहीं, वैसे ही पाप के उदय काल में सुख की संभावना नहीं। कर्म सिद्धान्त के रहस्य को समझे बिना ऐसा कहना कि धर्मी के घर धाड़ पड़ रही है व अधर्मी मौज कर रहा है ऐसा क्यों होता है? यह तो उल्टी गंगा बहने वाली बात है, परन्तु यह मिथ्या धारणा है। कर्म सिद्धान्त को यथावत् समझने पर वास्तविकता समझ में आयेगी, जब तक कर्मगति की करामात व कर्मसत्ता के सामर्थ्य पर श्रद्धा नहीं होगी तब तक धर्म पर दृढ़ रहना कठिन है व धर्म के मर्म को समझ पाना भी संभव नहीं।

- ७/२८, एम. पी. लेन, चिकपेट क्रास
बैंगलोर - ५६० ०५३

दक्षिण भारत की जैन जातियां

- श्री महावीर श्रीमंधर चव्हाण

दक्षिण भारत शताब्दियों तक जैन धर्म का गढ़ रह चुका है। विशेषकर कर्नाटक और तमिलनाडु में जैन धर्म सदियों तक जन धर्म बन चुका था। राष्ट्रकूटों के समय में राजा और प्रजा, सेनापति और सैनिक, किसान और व्यापारी, हर तबके के लोगों में जैन धर्म का ही बोलबाला था।[१] चारों वर्ण और सभी जातियों के लोग जैन बन गये थे।[२]

फिर एक समय ऐसा भी आया जब जैन धर्म के विरोध में कभी शैव, कभी वैष्णव तो कभी वीरशैव धर्म/संप्रदाय खड़े हो गये। जैन धर्म के विरुद्ध उन्होंने हिंसक आंदोलन चलाये। हजारों जैन मुनियों को मौत के घाट उतारा गया। अकेले मदुरा में ८००० जैन मुनियों की हत्या कर दी गयी। जैन श्रावकों को जैन धर्म छोड़ने के लिए मजबूर किया गया। जो श्रावक कट्टर थे, उन्होंने किसी भी हाल में जैन धर्म नहीं छोड़ा। ऐसे श्रावकों पर अत्याचार किये गये, उनको निर्वासित कर दिया गया। ऐसे श्रावक सुरक्षित स्थानों की ओर चले गये। कुछ श्रावकों ने ऊपरी तौर पर जैन धर्म छोड़ दिया, लेकिन गुप्त रूप से जैन बने रहे।

आज दक्षिण भारत में ऐसे कई जनसमूह हैं जो अपने आपको गर्व के साथ जैन कहलाते हैं और जैन आचारों का व्यवस्थित रूप से पालन करते हैं। दूसरे कुछ ऐसे भी समूह हैं जो अपने आपको जैन तो नहीं मानते, लेकिन उनमें कई जैन संस्कार मौजूद होते हैं, जैसे हिंसक व्यवसायों से दूर रहना, पानी छान कर पीना, शाकाहार, रात्रि भोजन त्याग इत्यादि। इसका मतलब यही निकलता है कि पहले ऐसे जनसमूह जैन धर्मानुयायी थे।

कुछ ऐसे जनसमूह भी होते हैं जिनका एक भाग जैन धर्मानुयायी होता है तो दूसरा शैव, वीरशैव या वैष्णव।

यहाँ मैं दक्षिण भारत की प्रमुख जैन जातियों की सूची दे रहा हूँ -

क. दक्षिण भारत की बड़ी जैन जातियां :[३]

जाति का नाम	प्रदेश
चतुर्थ	कर्नाटक, पश्चिम महाराष्ट्र

पंचम	कर्नाटक, पश्चिम महाराष्ट्र
बोगार	कर्नाटक
कासार	महाराष्ट्र
सैतवाल	महाराष्ट्र, उत्तर कर्नाटक
नैनार	तमिलनाडु

ख. मध्यम और छोटी जातियां

कांबोज	मराठवाड़ा (महाराष्ट्र)
जैन बन्ट	तुलुनाडु (कर्नाटक)
उपाध्ये	दक्षिण महाराष्ट्र, उत्तर कर्नाटक
जैन ब्राह्मण	दक्षिण कर्नाटक
अरसु	दक्षिण कर्नाटक
सादरू	दक्षिण कर्नाटक
गौडा	दक्षिण कर्नाटक
इन्द्र	तुलुनाडु (कर्नाटक)
हरदा	उत्तर कर्नाटक
चिप्पिगा	दक्षिण कर्नाटक
कोमटी	दक्षिण कर्नाटक, आंध्रप्रदेश

ग. जातियां, जो पहले जैन थीं लेकिन अब नहीं

गौंडर	तमिलनाडु
नाडर	तमिलनाडु
सोमवंशी क्षत्रिय कासार	महाराष्ट्र
कलार	महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु
गुरव	महाराष्ट्र

जैन प्रभावित जातियां

दक्षिण महाराष्ट्र की सुनार, परीट (धोबी), नाई, कुम्हार आदि कई जातियां रूढ़ अर्थ में जैन नहीं हैं, लेकिन उन पर जैन धर्म का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। वास्तव में पहले ये जातियां जैन ही थीं।[५] दक्षिण महाराष्ट्र की कोली और धनगर इन दो जातियों पर भी जैन धर्म का बड़ा प्रभाव है। अन्य जैन बहुल क्षेत्रों में भी ऐसी

जैन प्रभावित जातियां हैं, लेकिन मेरे पास यह लेख लिखते समय तक उनके बारे में विशेष जानकारी नहीं थी।

उपरोक्त जातियों में से धनगर, कोली और सुनार जातियों में जैन मुनि दीक्षाएं भी हो चुकी हैं। इन जातियों के कई युवक प्रसिद्ध जैन युवा संगठन, वीर सेवा दल के सदस्य, पदाधिकारी और प्रवचनकार तक हैं।

दक्षिण भारत की जैन जातियांः कुछ विशेषताएं

■ दक्षिण भारत की सभी जैन जातियां दिगंबर संप्रदाय को मानने वाली हैं।

■ उन पर भट्टारक परंपरा और बीसपंथ का प्रभाव है।

■ परंपरागत व्यवसायों में खेती का स्थान प्रमुख है।

■ कर्नाटक की सभी स्थानीय जैन जातियों को राज्य सरकार द्वारा 'अन्य पिछड़ी जातियों' का दर्जा दिया गया है, जबकि महाराष्ट्र में ५ जैन जातियों को यह दर्जा दिया गया है।

■ प्रमुख मातृभाषाएं प्रदेश के अनुसार मराठी, कन्नड, तुलु, तमिल, मलयालम आदि हैं। उत्तर कर्नाटक और दक्षिण महाराष्ट्र का जैन समाज द्विभाषी है और मराठी तथा कन्नड इन दोनों भाषाओं का अपने घर में प्रयोग करता है। इसी प्रकार तुलुनाडु का जैन समाज कन्नड और तुलु इन दोनों भाषाओं का प्रयोग करता है।

■ विभिन्न जैन जातियों में आपस में अंतर्जातीय विवाह बड़ी संख्या में होते हैं, विशेषकर शहरों में।

उत्तर भारत की अग्रवाल, ओसवाल, खंडेलवाल, पल्लीवाल आदि जैन जातियों के इतिहास पर शोध कार्य हो चुका है, लेकिन दक्षिण भारत की जैन जातियों पर विशेष शोधकार्य नहीं हुआ है। मैं जैन समाज शास्त्र और इतिहास के शोधकर्ताओं का ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहूंगा।

संदर्भ-

१. **The Rashtrakuta and Their Times** by Altekar A. S.
२. **शिवलीलामृत,** अध्याय १५ (मराठी धार्मिक पोथी)
३. **जैन सहयोग वधु...वर परिचय निर्देशिका** १६६६।
४. पूर्वोक्त तथा **Jain Community: A Social Survey** by Dr. Vilas Sangave
५. **The Kolhapur Jains : Kolhapur District Gazetteer.**

अन्य संदर्भ ग्रन्थ/स्त्रोत

१. महाराष्ट्र का जैन समाज : ले. महावीर सांगलीकर
२. **Census Report 1931**
३. **जैन आणि हिंदु** : ले. तात्या केशव चोपडे
४. लेखक द्वारा प्रत्यक्ष सर्वेक्षण

१६६, मुम्बई-पुणे रोड, चिंचवड़ ईस्ट, पुणे -४११०१६

दिगम्बर जैन समाज की जातियों का विवरण

पाण्डुलिपियों के अनुसार दिगम्बर जैन जातियों के नाम निम्न प्रकार हैं –

क्र.सं.	ब्रह्मजिनदास की जयमाला के आधार पर	विनोदीलाल की जयमाला के आधार पर	बख्तराम साह द्वारा वर्णित बुद्ध विलास के आधार पर	संवत् १८५२ की पांडुलिपि के आधार पर	सन् १९१४ में प्रकाशित दि. जैन डाय. के आधार पर
१.	गोलसिंगार	गोलसिंघारे	गोलसिंघारे	गोलसिंघाड़ा	गोलसिंघारे
२.	गोलराडा	गोलालारा	गोलालारे	गोलाराडा	गोलालारे
३.	बघेरवाल	बघेरवाल	बघेरवाल	बघेरवाल	वघेरवाल
४.	जैसवाल	जैसवाल	जैसवाल	जैसवाल	जैसवाल, (बीसा, दस्सा)
५.	श्रीमाल	श्रीमाल	श्रीमाल	श्रीमाल	श्रीमाल (दस्सा, बीसा)
६.	हूबड़	हूंबड	–	हूंबड	हूंबड (दस्सा, बीसा)
७.	मेड़तवाल	–	मेडतवाल	–	–
८.	खण्डेलवाल	खण्डेलवाल	खण्डेलवाल	खण्डेलवाल	खण्डेलवाल
९.	अग्रवाल	अग्रवाल	अग्रवाल	अग्रवाल	अग्रवाल
१०.	ओसवाल	वोसवाल	वोसवाल	वोसवाल	ओसवाल (दस्सा, बीसा)
११.	सहस्रजाति	–	–	–	–
१२.	पोरवाड	पोरवाड	–	पोरवाड	–
१३.	चित्तौड़ा	चित्तौड़ा	चित्तौड़ा	चित्तौड़ा	चित्तौड़ा (दस्सा, बीसा)
१४.	पल्लीवाल	पल्लीवाल	पल्लीवाल	पल्लीवाल	–
१५.	डेडूं	–	–	–	–
१६.	नरसिंह बोहरा	–	नरसिंह घेडा	नरसिंह घेडा	नरसिंहपुरा (बीसा, दस्सा)

१७.	लंबेचू	लंबेचू	लंबेचू	लंबेचू	लंबेचू
१८.	हरसौरा	–	हरसूरा	हरसूरा	–
१९.	देशवाल	देशवाल	–	–	–
२०.	गूजरजाति	वडगूजर	गूजरवाल	गूजरवाल	गुर्जर
२१.	छेहडवाल	–	–	–	–
२२.	रायकवाल	–	–	रायकवाड	–
२३.	गंगेडा	गंगेरवाल	गंगरीक	गांगरडा	गंगेरवाल
२४.	वापड़ा (गुजरात)	–	–	–	–
२५.	वंभेरा	–	–	–	–
२६.	नागद्रहा	नागद्रवाल	नागद्रहा	नागदा (बीसा, दस्सा)	–
२७.	वंधनोरा	वंधनोरा	–	वधणोरा	–
२८.	नागर	–	–	–	–
२९.	धाकड़	–	धकड़ा	धाकड़	धाकड़
३०.	रोहिणीवाल	रोहिणीवाल	–	–	–
३१.	नीवाकड	–	–	–	–
३२.	मोढ	–	–	–	–
३३.	मेवाडा	मेवाडा	मेवाडा	मेवाडा	मेवाडा (दस्सा, बीसा)
३४.	सोरठवाल	सोरठवाल	सोरठिया परिवार	–	
३५.	हरण	–	–	–	–
३६.	कपोल	कपोल	–	–	–
३७.	मालवडे	–	–	–	–
३८.	गोहिलवाल	–	–	–	–
३९.	सोहिडवाल	सोहिडवाल	सोडिलवाल	सहिलवाल	सेतवाल

४०.	लोहक	–	–	–	लोहिया
४१.	विश्वावास	–	–	–	–
४२.	राजाइल	–	–	–	–
४३.	जैसल	–	–	–	–
४४.	गौरड	–	गोरावाड	–	–
४५.	सोरा	–	–	–	–
४६.	महलवाल	–	–	–	–
४७.	चौबीसी	–	–	–	–
४८.	श्रीखंड	श्रीखंड	–	–	–
४९.	जुसमेरा	–	–	–	–
५०.	गुणवाल	–	–	–	–
५१.	राजुरा	गोहिलवाल	–	–	–
५२.	माथुर	गोहिलवाल	–	–	–
५३.	परवड़ा	–	–	–	–
५४.	विग्धूव	–	–	–	–
५५.	मोहवड	–	–	–	–
५६.	राजतवाल	–	–	–	–
५७.	कठनेरा	–	कठनेरा	कठनेरा	–
५८.	भीठ	–	–	–	–
५९.	कंकोल	–	–	–	–
६०.	अठवर्गी	बरगी	–	–	–
६१.	खीरणा	–	–	–	–
६२.	करडा	–	–	–	–

६३.	वधुनरा	-	-	-	-
६४.	उजण्या	-	-	-	-
६५.	विख्या	-	-	-	-
६६.	नतवाल	-	-	-	-
६७.	जागड़ा	-	-	-	-
६८.	कविथावल	-	-	-	-
६९.	कवितीक	-	-	-	-
७०.	धवलवाल	-	-	-	धवल
७१.	सोहितवाल	-	-	-	-
७२.	वोगार	-	-	-	वोगार ठगर बोगार
७३.	पंचम	पंचम	पंचम	पंचम	-
७४.	चतुर्थ	चतुर्थ	चतुर्थ	चतुर्थ	-
७५.	वैस्य	-	-	-	वेस्य
७६.	कापदी	-	कमटी	कोमटी	-
७७.	क्षत्रि॰ जैन	-	मड क्षत्रिय	क्षत्री	क्षत्रिय
७८.	श्रावक	-	-	श्रावक	श्रावक
७९.	नारायना	-	-	-	-
८०.	स्वरूवा	-	-	-	-
८१.	लोह	-	-	-	-
८२.	खंडायीता	खंडीयत	खंथडवाल	खंथडवाल	खंडायता

(श्री कैलाश चन्द्र जैन, ३७/७ बी, खेलात बाबू लेन, कोलकाता, के सौजन्य से)

महावीर का व्यापक आत्म प्रसार हो गया

केवल ज्ञानी महावीर का व्यापक आत्म प्रसार हो गया।
चेतनता की पावन लहरों से सुरभित संसार हो गया।

महावीर का धर्म नहीं बंध सकता सीमा के बंधन में,
महावीर हैं जीवमात्र के और बसे हैं सबके मन में,
महावीर पर जग व्यापी मानवता का अधिकार हो गया।
केवल ज्ञानी महावीर का व्यापक आत्म प्रसार हो गया।

महावीर का आत्म ज्ञान तो सब प्राणों का उन्नायक है,
अखिल विश्व की सारी जनता को वह ज्ञान प्रदायक है,
आत्म-तेज का महावीर के जन-जन में संचार हो गया।
चेतनता की पावन लहरों से सुरभित संसार हो गया।

महावीर आते हैं जग में सबके ही हितकारी बन कर,
वे निवास करते हैं सबके हृदयों में अधिकारी बनकर,
जिसने उनको समझा जग में उसका ही उद्धार हो गया।
केवल ज्ञानी महावीर का व्यापक आत्म प्रसार हो गया।

जग में जो कल्याण चाहते महावीर का वन्दन कर लें,
उनके आत्म-जनित भावों का वे सादर अभिनंदन कर लें,
महावीर की करुणा-धारा बहती गंगा धार हो गया।
केवल ज्ञानी महावीर का व्यापक आत्म प्रसार हो गया।

सब मिल कर के आज हृदय से त्रिशलानंदन की जै बोलो,
उनमें ध्यान लगा कर चिर संचित कर्मों की गांठें खोलो,
जिसने भक्ति भाव से ध्याया उसका बेड़ा पार हो गया।
केवल ज्ञानी महावीर का व्यापक आत्म प्रसार हो गया।
चेतनता की पावन लहरों से सुरभित संसार हो गया।

- डॉ. महावीर प्रसाद जैन 'प्रशान्त'
डी-११/६, राजेन्द्र नगर, लखनऊ

एक समर्पित व्यक्तित्व

अज्ञात स्वतन्त्रता सेनानियों के अन्वेषक श्री फूलचंद जैन

किसी भी भव्य अट्टालिका और उसके ऊपर बने सुन्दर कँगूरे दर्शकों का मन मोह लेते हैं और उनके मुख से सहसा 'वाह ! वाह !' की ध्वनि निकल पड़ती है। किन्तु किसी का ध्यान उस अट्टालिका की नींव, फर्श, भित्ती और छत के भीतर छिपी उन अनगिनत ईंटों की ओर नहीं जाता जिनके कारण वह अट्टालिका अस्तित्व में आ सकी। इसी प्रकार भवन की भव्यता से अभिभूत हो दर्शक उसके निर्माता, वास्तुकार और मुख्य शिल्पी का परिचय पाने को तो समुत्सुक दिखाई पड़ते हैं, किन्तु उन असंख्य श्रमिकों से उनका कोई सरोकार नहीं रहता जिनके स्वेद-सीकर के फलस्वरूप वह भव्य अट्टालिका आकार पा सकी। यही स्थिति देश को ब्रिटिश साम्राज्य की दासता से मुक्त कराकर उसे स्वतन्त्र सर्वतन्त्र गणतन्त्र राष्ट्र बनाने के लिये प्रयत्नशील रहे उन अगणित आम देशवासियों की है जिन्होंने विभिन्न आन्दोलनों, क्रान्तिकारी गतिविधियों आदि में निस्वार्थ भाव से भाग लेकर अपना सर्वस्व होम कर स्वातन्त्र्य-समर की अग्नि को प्रज्वलित रखा। वे अगणित आम देशवासी इतिहास का विषय होते हुए भी इतिहास की पुस्तकों में स्थान पाने से वंचित रह गुमनामी के अंधेरे में रहे। केवल हर आन्दोलन के चन्द प्रचार - प्रबंधन में प्रवीण स्वयंभू नेता चर्चा के विषय बने और इतिहास के पन्नों में स्थान पाने में सफल हुए। हमारा यहाँ यह कहने का आशय नहीं है कि उन नेताओं का स्वातन्त्र्य-समर के दौरान हुए विभिन्न आन्दोलनों में कोई योगदान नहीं रहा। किन्तु यह भी एक सत्य है कि यदि उनकी एक पुकार पर देश की आजादी के लिये अपने घर की देहरी से निकल, अपनी शिक्षा अधूरी छोड़, अपने जमे जमाये व्यवसाय को लात मार, अपने पारिवारिक सुख और उत्तरदायित्वों से मुँह मोड़ जेल की सलाखों के पीछे जाने का साहस करने वाले, यातना झेल सकने वाले, साधारण समझे जाने वाले किन्तु असाधारण शक्ति वाले असंख्य देशवासी उनके पीछे नहीं आते तो उन नेताओं के आन्दोलन सफलता से कोसों दूर रहते और उन्हें भी कोई नहीं जान पाता। कहा भी है -'वतन की जंगे-आजादी में यूं तो शहीद हुए हजारों, किन्तु जिनके नाम लिये जाते हैं वे अंगुलियों पै हैं यारो।' अतः आवश्यकता उन साधारण, किन्तु असाधारण शक्ति वाले, असंख्य स्वतन्त्रता सेनानियों के बारे में भी जानने की है जो गुमनामी के अंधरे में रहे।

यह एक सुखद संयोग रहा कि सन् १९५० ई. में जब दिल्ली के स्वतन्त्रता सेनानी बहादुर शाह ज़फर मार्ग पर स्थित जेल, जिसकी दीवारों और सलाखों के साथ उनकी अतीत की रोमांचकारी स्मृतियां जुड़ी हुई थीं और जो शीघ्र ही तिहाड़ स्थानान्तरित होने वाली थी, में एकत्रित हो पावन मिलन समारोह मना रहे थे, यह विचार सामने आया कि भारत की स्वतंत्रता के लिये कष्ट झेलने वाले सभी स्वतंत्रता सेनानियों की नामावली तैयार की जाय। यह दुष्कर दायित्व दिल्ली वासी ४३ वर्षीय श्री फूलचंद जैन को सौंपा गया जिन्होंने सन् १९३०, १९३२ और १९४२ के आन्दोलनों में सक्रिय भाग लिया था और जो ब्रिटिश राज की जेलों के स्वाद को बिना अधिक प्रयास के शब्द-बद्ध कर सकते थे। वह स्वाद स्मृति में कटु होते हुए भी गर्व की भावना पैदा करने वाला था।

यह दायित्व सम्हालने पर श्री फूलचंद जैन ने सन् १९०५ ई. से सन् १९४७ ई. के मध्य दिल्ली के कारागारों में रहे क्रान्तिकारियों के विषय में प्रामाणिक जानकारी प्राप्त करने के ध्येय से अपने जीवन के शेष ४७ वर्ष, अर्थात् सन् १९९७ ई. में नब्बे वर्ष की वय में अन्तिम सांस गिनने तक, उनकी खोज में व्यतीत किये। वह एक पुलिस थाने से दूसरे थाने, एक कचहरी से दूसरी कचहरी, जेल-रिकार्डों या फिर सम्बन्धित सरकारी महकमों में मुकदमों के फैसले और अन्य दस्तावेजों की तलाश में अधिकतर साइकिल से जाते रहे। थानों, कचहरियों-अदालतों, जेलों और उनके अभिलेखागारों में अकसर उन्हें धूल चाटनी पड़ी और निराशा उनके हाथ लगी, थकान भी हुई, किन्तु वह हताश नहीं हुए। प्रत्युत अपनी इस खोज-यात्रा में वह अग्रसर रहे। अनेक क्रान्तिकारी अपने छद्म नामों के साथ कार्य करते थे और पुलिस-रिकार्ड में उनकी पहचान को रेखांकित कर पाना कठिन होता था। श्री जैन पूरी तहकीकात कर वास्तविक व्यक्तित्व तक पहुँचने का प्रयास करते थे। अत्यन्त श्रम-साध्य था यह कार्य। इस कार्य में उन्हें अनेक सरकारी गोपनीय दस्तावेजों को देखने का सुयोग तत्कालीन केन्द्रीय गृह मंत्री पं. गोविन्द बल्लभ पन्त की अनुकम्पा से मिला।

श्री जैन समर्पित भाव से योगी की भांति इस कार्य में रत रहे। अनथक गति से उन्होंने जो नोट्स लिये थे उनसे ही ६००० पृष्ठ भरे गये। २५००० व्यक्ति-कार्डों में स्वतन्त्रता सेनानियों की गतिविधियों की सूचना उन्होंने टंकित की थी। वह अपने पीछे चार अलमारियों में भरी लगभग दस हजार पृष्ठों की हस्तलिखित और टंकित सामग्री, उपर्युक्त २५००० व्यक्ति कार्ड तथा विभिन्न स्रोतों से जुटाई गई महत्वपूर्ण सूचनाओं से युक्त ढेर सारी फाइलें और कागजात, जो आज इतिहास की अमूल्य धरोहर हैं, छोड़ गये। उनकी इस साधना-यात्रा के दौरान 'गांधी शान्ति प्रतिष्ठान' ने पांच वर्ष तथा

'भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद्' ने दो वर्ष तक कार्य करने हेतु आर्थिक मदद प्रदान की थी।

जीवन के अंतिम प्रहर में रह-रह कर एक उदासी, एक आशंका श्री जैन को घेर लेती थी कि कहीं ऐसा न हो कि उनकी बरसों से शब्द-शब्द में संजोयी इतिहास की घटनाएं कागजों का ढेर बनकर रह जाएं। उनकी अदम्य चाहना थी कि देश की सन्तति बलिदान करने वालों को जाने-समझे और अपनी परम्परा से जुड़े। उनकी यह गहन आकांक्षा अन्ततः रंग लाई। उनकी मृत्यु से चन्द दिन पूर्व भारत सरकार के संस्कृति विभाग एवं भारत की स्वतंत्रता की ५०वीं वर्षगांठ के आयोजन की राष्ट्रीय समिति के सचिव श्री बी. पी. सिंह राष्ट्रीय अभिलेखागार के निदेशक श्री ए. सरकार के साथ उनके निवास पर पधारे। उनकी विपुल सामग्री को देखा और उन्होंने उसके प्रकाशन का आश्वासन उन्हें तुरन्त दे डाला। जैन के दिवंगत हो जाने पर भी वे अपनी वचनबद्धता नहीं भूले। कार्य को सुनियोजित रूप से सम्पादित करने के लिये शीघ्र ही एक सात सदस्यीय सम्पादन सलाहकार समिति गठित हो गई। डॉ. मस्तराम कपूर ने सम्पादक प्रमुख का कार्यभार मानद रूप से स्वीकार कर लिया तो कन्सेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली, ने ग्रन्थ के प्रकाशन और वितरण का दायित्व अपने ऊपर ले लिया। यही नहीं, इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज, नई दिल्ली, के निदेशक ने श्री जैन की संचित अपार ज्ञान राशि को संरक्षित रखने हेतु सारी सामग्री अपनी अभिरक्षा में ले ली। **स्वतन्त्रता सेनानी ग्रन्थमाला** ग्यारह खण्डों में प्रकाशित करने की योजना बनी। खण्ड एक से तीन तक क्रमशः दिल्ली जेल, अंडमान जेल और देवली जेल के बंदीनामा हैं; खण्ड चार शहीदनामा; खण्ड पांच शाहीनज़रबन्दनामा; खण्ड छः व सात क्रान्तिकारी आन्दोलन विषयक; खण्ड आठ 'भारत छोड़ो' आन्दोलन के बारे में, खण्ड नौ नेताजी और आजाद हिन्द फौज, खण्ड दस दिल्ली के स्वतन्त्रता सेनानी और खण्ड ग्यारह अनुक्रमणिका विषयक हैं।

अभी हाल ही में हमें नागपुर निवासी बन्धुवर अनिल जैन के सौजन्य से इस ग्रन्थमाला के 'भारत छोड़ो' आन्दोलन विषयक खण्ड आठ के कुछ पृष्ठों की छाया प्रति उपलब्ध हुई जिससे हमें उपर्युक्त जानकारी प्राप्त हुई। उससे यह भी विदित हुआ कि श्री राजमोहन गांधी के प्राक्कथन से युक्त ग्रन्थमाला का प्रथम खण्ड दिसम्बर १९९७ ई. में प्रकाशित हो गया था और यह आठवां खण्ड सन् १९९९ ई. में दो वर्ष के अन्तराल में ही प्रकाश में आ गया। इस प्रकार यह वृहत्कार्य द्रुतगति से सम्पन्न हुआ।

इस महत्वपूर्ण ग्रन्थ के जनक श्री फूलचन्द जैन के जीवन पर भी दृष्टिपात करना अप्रासंगिक न होगा। वह दिल्ली के सब्जी मण्डी जवाहरनगर निवासी मिलापचंद जैन

के सुपुत्र थे। उनका जन्म ७ दिसम्बर, १९०७ ई. को हुआ था। स्कूली शिक्षा मैट्रिक तक पाई थी। वह मेधावी और संवेदनशील थे। तत्कालीन राजनीतिक हलचलों, विशेषकर जलियां वाला बाग के नरसंहार जैसी घटनाओं ने उनके बाल हृदय में देश की आजादी के लिये अग्नि प्रज्वलित कर दी। कालान्तर में उन्होंने सक्रिय राजनीति में प्रवेश किया। महात्मा गांधी से प्रभावित हो सन् १९३० ई. के 'नमक आन्दोलन' तथा सन् १९४२ ई. के 'भारत छोड़ो आन्दोलन' में उन्होंने भाग लिया और कई बार जेल यात्राएं कीं। उनकी धर्मपत्नी चमेलीदेवी जैन उनके कार्यों में सहभागी रहीं। सन् १९३५ से १९४७ ई. तक वह दिल्ली प्रदेश कांग्रेस के सचिव रहे। स्वतंत्रता प्राप्ति के क्षणों में देश जिस उद्वेलन से गुजरा था उसमें उन्होंने धर्म और विवेक से साम्प्रदायिकता का विरोध किया तथा अनेक अपहृत हिन्दू-मुस्लिम महिलाओं के पुनर्वास का सराहनीय कार्य किया। सन् १९५१-५४ के दौरान वह दिल्ली के म्युनिसिपल कमिश्नर रहे। वह २५ वर्ष तक पत्रकारिता से जुड़े रहे। सन् १९३० ई. के लगभग 'अर्जुन' (जो बाद में 'वीर अर्जुन' कहलाया) पत्र से जुड़े। सन् १९३४ से १९४२ ई. के मध्य यू.पी.आई./ए.पी.आई. समाचार एजेन्सियों से सम्बद्ध रहे। उन्हें श्री लक्ष्मीचंद जैन और डॉ. गुणमाला नवलखा के पिता होने का सौभाग्य रहा।

'भारत छोड़ो आन्दोलन' में कांग्रेस के बुलेटिनों के वितरण के संचालन की अहम भूमिका फूलचंद जैन सम्हाले हुए थे। ४ सितम्बर, १९४२ ई. तक कार्य निर्विघ्न चला, किन्तु ५ सितम्बर, १९४२ ई. को पुलिस ने भारत रक्षा कानून की धारा १२९ के अन्तर्गत उन्हें गिरफ्तार कर दिल्ली के लाल किले में भूमिगत बाबड़ी में बनाई गई हवालात में बन्द कर दिया। इससे पहले १९३३ ई. में भी वह इस हवालात में बन्द रह चुके थे। २४ अक्टूबर, १९४२ ई. को उन्हें नजरबंद बंदी सं. १३४ के रूप में दिल्ली जेल भेज दिया गया। तदनन्तर १३ नवम्बर, १९४२ ई. को भारत रक्षा कानून की धारा २६ के अन्तर्गत ओल्ड सेन्ट्रल जेल मुल्तान भेज दिया गया। १० जनवरी, १९४५ ई. को फिरोजपुर जेल से वापस दिल्ली जेल नजरबंद बंदी सं. ४०२ के रूप में आये और ११ जनवरी, १९४५ ई. को रिहा कर दिये गये। लगभग दो वर्ष साढ़े चार माह की इस कारावास-अवधि में उनकी धर्मपत्नी चमेलीदेवी जैन, जो सन् १९३२ ई. के आन्दोलन में जेल काट चुकी थी, ने धैर्यपूर्वक अपने ज्येष्ठ पुत्र लक्ष्मीचंद जैन के सहयोग से आन्दोलन की सफलता के लिये सन्देशवाहक का कार्य सम्हाला। मई १९४३ ई. में उनका १८ वर्षीय अनुज कस्तूरचंद जैन, जो कामर्शियल कालेज का छात्र था, भी कांग्रेस के बुलेटिन-वितरण करने के अपराध में भारत रक्षा कानून की धारा १२८ के अन्तर्गत गिरफ्तार कर पहले सब्जी मण्डी थाने में बन्द किया गया, फिर २९

जून, १६४३ ई. से २ जुलाई, १६४३ ई. तक नई दिल्ली थाने में और उसके बाद नजरबंद बंदी सं. २४६ के रूप में दिल्ली जेल में बन्द कर दिया गया और वहां से १६ जुलाई, १६४३ ई. को रिहा हो सका।

ग्रन्थ के 'भारत छोड़ो' आन्दोलन खण्ड आठ से राजधानी दिल्ली में उक्त आन्दोलन के सिलसिले में ११ अगस्त से २ अक्टूबर, १६४२ ई. के मध्य घटी विभिन्न घटनाओं में संलिप्त पाये गये निम्नलिखित जैन युवकों की जानकारी भी मिलती है जिन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा ४३५/४५२/४३० तथा भारत रक्षा कानून की धारा १२६ के अन्तर्गत गिरफ्तार कर जेल में निरुद्ध किया गया था-

१. २३ वर्षीय **हुकमचन्द जैन** (पुत्र जौहरीलाल जैन, बिजली वाले, डिप्टीगंज, दिल्ली)
२. **बनवारीलाल जैन** (पुत्र शोकीलाल जैन, दुकानदार, कूचा/नटवा, दिल्ली)
३. **फूलचंद जैन** (पुत्र माठूमल जैन, सर्विस पेशा, धर्मपुरा, दिल्ली)
४. **राजकुमार जैन** (पुत्र चन्दुलाल जैन, वस्त्र व्यवसायी, बड़शाहबुल्ला, दिल्ली)
५. हिन्दु कालेज के विद्यार्थी **फ़तेहचंद जैन** (पुत्र लक्ष्मीचंद जैन)
६. **कबूलचंद जैन** (पुत्र रामजीलाल जैन, वस्त्र व्यवसायी, पहाड़ी धीरज, दिल्ली)
७. २५ वर्षीय **पदमचंद जैन** (पुत्र फूलचंद जैन) तथा
८. २६ वर्षीय **हेमचन्द्र जैन** जो फिरोजपुर जेल से दिल्ली जेल वापस लाये गये।

- रमा कान्त जैन

पारदर्शी दोहे

जीओ और जीने दो, महावीर सन्देश।
सत्य 'पारदर्शी' यही, पहुँचे देश-विदेश।।१।।
परम शक्ति अहिंसा है, सब धर्मों की खान।
धर्म 'पारदर्शी' दया, हिंसा तज इन्सान।।२।।
दीप-ज्योति जगमग जले, फैले ज्ञान-प्रकाश।
हृदय 'पारदर्शी' रहे, दया-प्रेम-विश्वास।।३।।

- श्री ॐ प्रकाश डाँगी 'पारदर्शी'
पारदर्शी साधना केन्द्र, २६१, उत्तरी आयड़, उदयपुर

आध्यात्मिक कुण्डलियाँ

(१)

धर्म सनातन सत्य है, समरसता की सिद्धि।
आदर्शों का पुण्य यह, गर्हित कर्म-निषिद्धि।
गर्हित कर्म-निषिद्धि, वृत्तियों का है शोधक।
पावन परम पुनीत आचरण, का है बोधक,
धर्म नहीं है पन्थ, न मत पूजा या अर्चन।
ऊर्ध्वमुखी जीवन-शैली है धर्म सनातन।

(२)

जीव भिन्न है ब्रह्म से, या दोनों हैं एक।
समाधान जिनका नहीं, ऐसे प्रश्न अनेक।
ऐसे प्रश्न अनेक, हृदय को मथते रहते।
कोई कहता जग मिथ्या तो सच कुछ कहते।
सुलझा सकी न गुत्थी उलझी, बुद्धि खिन्न है।
जीव ब्रह्म है या कि ब्रह्म से जीव भिन्न है।

(३)

सृष्टि-नियन्ता कौन है क्या है उसका रूप।
कहीं सघन छाया-सदृश, कहीं प्रखरतम धूप।
कहीं प्रखरतम धूप, करोड़ों सूर्य-सरीखा।
कहीं उलूखल बँधा, संविग्रह हठ-सा दीखा।
चित्रकार वह अतुलनीय, अद्भुत अभियन्ता।
अपना ही उपमान बना है, सृष्टि नियन्ता।

- डॉ. गणेशदत्त सारस्वत
सारस्वत सदन, सिविल लाइंस, सीतापुर

साहित्य-सत्कार

(१) ज्ञान प्रकाश, द्वितीय भाग : लेखक व प्रकाशक- वैद्य प्रकाशचन्द्र जैन 'पांड्या', ५६६, पांड्या भवन, मनिहारों का रास्ता, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर-३०२००३; सितम्बर २००८; पृ. ५५+८; मूल्य ४०/-

वैद्य प्रकाशचन्द्र जैन पांड्या जी ने अपने १४ लेखों का एक संग्रह **'ज्ञान प्रकाश, प्रथम भाग'** में प्रकाशित किया था। **ज्ञान प्रकाश** के इस **द्वितीय भाग** में उन्होंने जैन धर्म एवं जैन संस्कृति की सर्व प्राचीनता पर प्रकाश डालते हुए तीन लेखों का प्रकाशन किया है। जैन धर्म एवं जैन संस्कृति की सर्वप्राचीनता पर व्यापक प्रकाश, विश्व में जैन धर्म की प्राचीनता और जैन धर्म की प्राचीनता पर अभिमत, शीर्षकों के अन्तर्गत इन लेखों का समायोजन है।

विभिन्न पौराणिक एवं देशी-विदेशी परंपराओं के अनुश्रुतिगम्य साहित्य और उन पर हुई आधुनिक शोध आदि के सन्दर्भ से जो प्रतिपादन लेखक द्वारा किया गया है वह विचारणीय है। Jainism, the Oldest Living Religion, में १९५१ में सर्वप्रथम स्वर्गीय डॉ. ज्योति प्रसाद जैन ने जैन धर्म की प्राचीनता के सम्बन्ध में विषय का समीचीन विवेचन किया था। लेखक ने उक्त पुस्तक का और डॉ. जैन के अभिमत का उल्लेख भी किया है।

अपने उपयोगी लेखों का स्वयं प्रकाशन कर जिज्ञासुओं को उपलब्ध कराने के लिए पाण्ड्या जी को हार्दिक साधुवाद!

(२-३) श्री चन्द्रशेखर धर्माधिकारी द्वारा लिखित- (१) एक न्यायमूर्ति का हलफनामा और (२) लोकतंत्र, न्याय एवं राहों के अन्वेषी : सम्पादक श्री जमनालाल जैन; प्र. सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी-२२१००१; मूल्य रु. १२०/- प्रति पुस्तक।

उपरोक्त प्रथम पुस्तक न्यायमूर्ति चन्द्रशेखर धर्माधिकारी द्वारा मूल रूप में मराठी भाषा में लिखित है। दोनों ही पुस्तकों का हिन्दी में सम्पादन श्री जमनालाल जैन द्वारा किया गया है और उन्हीं के सौजन्य से ये पुस्तकें हमें प्राप्त हुई हैं जिसके लिए हम उनके हृदय से आभारी हैं।

प्रथम पुस्तक **"एक न्यायमूर्ति का हलफनामा"** में श्री चन्द्रशेखर धर्माधिकारी ने आत्मकथात्मक विवरण दिया है। उनका जन्म २० नवम्बर, १९२७ ई., को हुआ

था और वह अपने पिता दादा धर्माधिकारी के तृतीय पुत्र थे। महात्मा गांधी के प्रति उनकी गहन आस्था रही। इनके पिता गांधीजी के निकट सम्पर्क में रहे थे। ४६ परिच्छेदों में उन्होंने अपने ८१वें साल तक का संस्मरणात्मक विवरण, अपने पितामह एवं परिवार के विवरण के साथ प्रस्तुत किया है। यह रोचक भी है, देश की दशा का चित्र भी प्रस्तुत करता है और शिक्षाप्रद भी है।

दूसरी पुस्तक **'लोकतंत्र, न्याय एवं राहों के अन्वेषी'** में खंड १ में लोकतंत्र और न्याय पालिका के सम्बन्ध में १३ आलेख हैं; खंड दो में संस्मरण स्वरूप १७ आलेख हैं और खंड ३ में जन जागरण विषयक १७ आलेख हैं। ये लेख धर्माधिकारी जी ने हिन्दी में ही लिखे जिसे वह 'हिराठी' यानी मराठी युक्त हिन्दी के नाम से अभिहित करते हैं। 'वर्तमान सन्दर्भ में सरदार पटेल' आलेख सरदार पटेल के व्यक्तित्व पर रोचक प्रकाश डालता है। यह उल्लेखनीय है कि 'वीर वृत्ति का विकास इस देश की राजनीति में पहली बार सरदार ने किया था। वैर वृत्ति सरदार के जीवन में कभी नहीं रही।" जवाहर लाल जी में और वल्लभभाई जी में झगड़ा लगाने की कोशिश की गई, परन्तु वह निष्फल रही।

एक अन्य महत्वपूर्ण आलेख "न्याय पालिका का सतीत्व है"। न्यायमूर्तियों के लिए आचार संहिता औ उसके समुचित अनुपालन पर जो विचार व्यक्त किये गये हैं वे शाश्वत हैं। यह चिन्तनीय है कि न्यायमूर्ति के पद पर रहते जिस आचार संहिता और मूल्यों का पालन अपेक्षित है, सेवा निवृत्ति के बाद भी उन्हें निभाया जाये ताकि न्यायालय और न्यायमूर्ति के प्रति विश्वास और भावना को ठेस न लगे।

न्यायमूर्ति धर्माधिकारी जी के ये दोनों लेख संग्रह ज्ञानवर्धक और चिन्तन प्रेरक हैं। लेखक और सम्पादक तथा प्रकाशक को साधुवाद!

(४) **धवल कीर्तिमान** : लेखक- डॉ. कपूरचंद जैन एवं डॉ. (श्रीमती) ज्योति जैन; प्रकाशक श्री ताराचंद प्रेमी, महामंत्री, श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ, चौरासी, मथुरा; २००८; पृ. २२४, मूल्य रु. १००/-

श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ, मथुरा, का इतिहास इसमें तीन खंडों में संकलित किया गया है। खंड-१ में संघ की स्थापना उद्‌देश्य, सफलता और उसके कीर्तिमान का १६ अध्यायों में उल्लेख है। खंड २ में **जैन सन्देश** और उसके **शोधांक** के सम्बन्ध में ६ अध्याय हैं। "जैन संदेश शोधांक : एक पर्यालोचन" आलेख हमारे द्वारा प्रस्तुत है जिसे इसमें सम्मिलित किया गया है और इसके लिए हम आभारी हैं। खंड-३ में संघ द्वारा प्रकाशित ३५ कृतियों का विवरण है।

सम्पादकीय में दोनों लेखकों ने १८ पृष्ठों में इस विवरण को प्रस्तुत किये जाने की आवश्यकता और उपादेयता पर प्रकाश डालने के साथ ही इसको संकलित करने में उन्हें जो श्रम और अध्यवसाय करना पड़ा उसका विवरण भी दिया है। उन्होंने इस बात की चर्चा भी की है कि इसका नाम **"धवल कीर्तिमान"** क्यों रखा। उन्होंने संघ के प्रकाशनों की दृष्टि से इस नाम का औचित्य निर्दिष्ट किया है। उनका यह विचार एक दृष्टि से उचित हो सकता है। परन्तु विषय की दृष्टि से नाम इस प्रकार का होना अपेक्षित था कि पुस्तक के नाम से ही यह भासित हो जाये कि यह श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ मथुरा का इतिहास या विवरण है।

इस श्रम-साध्य प्रस्तुति के लिए और श्री नरेन्द्र प्रकाश जैन के प्राक्कथन के लिए तथा वयोवृद्ध प्रेमी जी को इसके प्रकाशन के लिए हमारा अभिनन्दन और साधुवाद प्रेषित है।

(५) आत्मा से परमात्मा का विज्ञान : ले. पं. नाथूलाल जैन शास्त्री ; सम्पादक-श्री अरविन्द कुमार जैन; प्र. श्री दिगम्बर जैन युवक संघ, श्री दिगम्बर जैन पंच बालयति पारमार्थिक एवं धार्मिक ट्रस्ट; ए.बी.रोड, इन्दौर; पृ. २१८; मूल्य रु. १००/-

यह पुस्तक पं. नाथूलाल जैन शास्त्री द्वारा लिखी गई थी जो उनके दिवंगत होने के बाद प्रकाशित हो सकी है। इसमें ३५ अध्यायों में जैन धर्म, दर्शन और समाज के विषय में चिन्तन प्रस्तुत किया गया है। पंडित जी जैन धर्म की परंपरा के विशिष्ट विद्वान थे। इस पुस्तक में संग्रहीत उनके आलेख जैन धर्म-दर्शन को समझने में सहायक हैं। पंडित जी के सुपुत्र श्री जिनेन्द्र कुमार जैन ने इसे हमें उपलब्ध कराया जिसके लिए हम उनके आभारी हैं।

(६) धर्ममंगल : धर्ममंथन - (प्रथम किस्त) - मंत्र तंत्र विशेषांक (जुलाई-अगस्त २००८) : सम्पादिका प्रा. सौ. लीलावती जैन, १, सलिल अपार्टमेंट, ५७, सानेबाडी, औन्ध, पुणे-४११००७।

१९८५ से २००८ तक मंत्र-तंत्र के सम्बन्ध में सौ. लीलावती जी के २३ लेखों का इसमें संकलन है। मंत्र-तंत्र के नाम से साधु-समाज, सामान्य जैन समाज को जिस प्रकार से भ्रमित और गुमराह कर रहा है इसका समुचित भंडाफोड़ इन लेखों में किया गया है। यह संग्रह विशेष रूप से रोचक और संग्रहणीय है। इसके प्रकाशन के लिए लीलावती जी को हार्दिक साधुवाद !

- डॉ. शशि कान्त

(७) **द्रव्य-संग्रह मुनि नेमिचन्द्र सिद्धान्तिदेव द्वारा रचित :** हिन्दी और इंगलिश भाषाओं में अर्थ सहित सम्पादन श्री शान्तिलाल जैन द्वारा; प्र. मैत्री समूह; प्राप्ति स्थान- श्री पी. एल. बैनाड़ा, १/२०५/IV, प्रोफेसर कॉलोनी, हरि पर्वत, आगरा; प्र.सं. अगस्त २००८; पृ. १६७+२३+३; मूल्य रु. ६०/-

प्राकृत भाषा में ५८ गाथाओं में ग्रथित **'द्रव्य संग्रह'** कृति, गाथा ५८ के अनुसार, मुनि नेमिचन्द्र द्वारा विरचित है। प्रथम गाथा में मंगलाचरण स्वरूप जीव-अजीव द्रव्यों का वर्णन करने वाले जिनवर वृषभ (ऋषभदेव) की वन्दना की गई है और अन्तिम गाथा में ग्रन्थकार ने अपने नाम का उल्लेख 'तनुश्रुतधर' (अल्पज्ञ) विशेषण के साथ करके अपनी विनम्रता और निरंहकार वृत्ति प्रकट की है। शेष ५६ गाथाओं में छह द्रव्यों, सात तत्त्वों और नौ पदार्थों का वर्णन कर मोक्ष के साक्षात् कारण ध्यान योग का वर्णन किया गया है।

इस कृति पर श्री ब्रह्मदेव सूरी (वि.सं. ११५०-१२००) ने संस्कृत में टीका रची थी। कृतिकार मुनि नेमिचन्द्र **गोम्मटसार, त्रिलोकसार** (६७३ ई.), **लब्धिसार** और **क्षपणसार** जैसे सिद्धान्त ग्रन्थों के रचयिता और गंग नरेशों के महामात्य और सेनापति चामुण्डराय के बालसखा एवं गुरुवत रहे नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती तथा १६वीं शती ई. में **गोम्मटसार** पर संस्कृत में **जीवतत्त्वप्रदीपिका** टीका रचने वाले नेमिचन्द्र से भिन्न हैं। विवेच्य मुनि नेमिचन्द्र **उपासकाध्ययन** के कर्ता वसुनन्दि सिद्धान्तिदेव के गुरु और नयनन्दि के शिष्य रहे। उनका समय ११वीं शती ईस्वी है। संस्कृत टीकाकार ब्रह्मदेव सूरि ने उन्हें 'सिद्धान्तिदेव' लिखा है और ग्रन्थ की रचना मालवा के परमारवंशी नरेशों के राज्यकाल में आश्रम नगर के श्री मुनिसुव्रत चैत्यालय में राजश्रेष्ठी सोम के अनुरोध पर हुई बताई है। यह भी उल्लेख किया है कि नेमिचन्द्र सिद्धान्तिदेव ने पहले २६ गाथाओं में **'लघु द्रव्य संग्रह'** की तथा कालान्तर में ५८ गाथा वाले प्रस्तुत **'वृहद् द्रव्य संग्रह'** की रचना की थी।

यह ग्रन्थ अनेक परीक्षालयों के पाठ्यक्रम में अंगीकृत है। हिन्दी में इस पर अनेक व्याख्याएं प्रकाशित हुई हैं। मराठी में भी अनुवाद हो चुका है और इंगलिश भाषा में सन् १९१७ ई. में प्रो. शरच्चन्द्र घोषाल द्वारा सम्पादित संस्करण आरा से, सन् १९५६ ई. में दिल्ली से तथा १९८६ ई. में मुम्बई से प्रकाशित हुए हैं।

पूर्व प्रकाशित संस्करणों में जो कमियां रह गई थीं उनका परिहार करने और कृति को प्रारम्भिक जिज्ञासुओं के लिये भी सरल-सुबोध बनाने की दृष्टि से

जैनधर्म-दर्शन के मर्मज्ञ विद्वान बन्धुवर शान्तिलालजी ने मुनि श्री अभयसागर जी के मार्गदर्शन में प्रस्तुत संस्करण को स्वरूप प्रदान किया है। इसमें मूल प्राकृत गाथाओं के साथ संस्कृत छाया, इंगलिश में प्राकृत गाथाओं का उच्चारण हेतु रूपान्तरण, प्राकृत गाथाओं में प्रयुक्त शब्दों का इंगलिश में अर्थ, प्रत्येक गाथा का हिन्दी में अर्थ, इंगलिश में भावार्थ तथा हिन्दी व इंगलिश में सम्पादक द्वारा व्याख्या दी गई है। हिन्दी और इंगलिश में **'द्रव्यसंग्रह'** के इस प्रकार सुबोध सम्पादन हेतु सम्पादक साधुवाद के पात्र हैं।

(८) आओ, जरा सोचें ! : ले. आचार्य अशोक सहजानन्द; प्र. स्वाति अकादमी, बी-५/२६३, यमुना विहार, दिल्ली-११० ०५३; वितरक-मेघ प्रकाशन, २३६, गली कुंजस, दरीबाकलां, चांदनी चौक, दिल्ली-११० ००६; प्र.सं. २००८ ई.; पृ. १२५; मूल्य रु. १५०/-

समकालीन राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक प्रवृत्तियां या यूं कहिये विसंगतियां सुप्रसिद्ध चिन्तक आचार्य अशोक सहजानन्द के मानस को उद्वेलित करती रहीं और उन्होंने समय-समय पर तत्सम्बन्धी अपने विचारों को शब्द बद्ध किया। सहज-सुबोध भाषा में संक्षेप में अभिव्यक्त ये विचार पाठकों को उस सम्बन्ध में सोचने-विचारने को प्रेरित करते हैं। प्रस्तुत कृति में उनके ऐसे ३१ विशिष्ट आलेख समाहित हैं जिनमें उन्होंने विसंगतियों पर करारा प्रहार किया है। इन आलेखों के आकर्षक शीर्षक ही यथा-खुलकर प्रेम करने की छूट; मौन बहिष्कार; ये मुर्दाफरोश!; इक्कीसवीं सदी!; लोकतंत्र की विजय का दावा!; आनंद कहाँ?; साधना कैसे?; मिनिस्टर या मॉनस्टर; मन पछितइ है अवसर बीते!; श्रेष्ठतम उपलब्धि?; हींग लगे न फिटकरी; बीती ताहि बिसार दे; आध्यात्मिकता या व्यावसायिकता; मीडिया की भूमिका!; आरोग्य की कुंजी; एक अनुकरणीय प्रयत्न; असफलता से भय क्यों?; सावधान, इन तांत्रिकों से!; ज्योतिष का सच!; रत्न पहनिए, पर सोच-समझकर; और एकल परिवार की बलि चढ़ती वयोवृद्ध पीढ़ी-पाठक को उन्हें पढ़ने के लिये बाध्य कर देते हैं। यह आवश्यक नहीं है कि लेखक के सभी विचारों से हर कोई सहमत ही हो, तदपि लघु आकार के ये लेख सतसैया के दोहों और नावक के तीर की भांति मन-मस्तिष्क में गहरी चोट करने वाले हैं। इनके प्रणयन हेतु आचार्य अशोक सहजानन्द जी साधुवाद के पात्र हैं।

(९) **भगवान महावीर** : ले. सुश्री अर्चना शर्मा; चित्रांकन श्री शंकर नायक; प्र. सुरेन्द्र कुमार एण्ड सन्स, ३०/२१ ए-२२ ए, गली नं. ६, विश्वास नगर, शाहदरा, दिल्ली-११० ०३२; प्र.सं. २००७; पृ. १३६; मूल्य रु. १५०/-

किसी कृति की सफलता की कसौटी है कि पाठक पोथी पढ़ना प्रारम्भ करे तो उसे पूरी करके ही रखने का मन चाहे। इस कसौटी पर प्रस्तुत कृति खरी उतरती है। इसमें चौबीसवें तीर्थंकर वर्धमान महावीर (ईसा पूर्व ५६६-५२७) की जीवनी, शिक्षाओं और दर्शन को दिगम्बर और श्वेताम्बर परम्पराओं में प्राप्त विवरण के आधार पर रोचक कथात्मक शैली में अनुस्यूत किया गया है। साथ ही बीच-बीच में जैन धर्म से सम्बन्धित अन्य ज्ञातव्य संक्षेप में संजोया गया है। कहीं-कहीं कुछ तथ्यात्मक विसंगतियां भी दृष्टिगत होती हैं यथा-पृष्ठ १४ पर कलिंग राजकुमारी यशोदा की माता का नाम भी यशोदा लिखा जाना, पृष्ठ ४८ पर 'मगध' के स्थान पर 'सौराष्ट्र' और पृष्ठ १०० पर 'लाढ़' (बांगलादेश का सुन्दरवन डेल्टा का आदिवासी जाति क्षेत्र) के स्थान पर 'लाट' (गुजरात) का उल्लेख किया जाना इत्यादि। जैनेतर द्वारा प्रणीत और प्रकाशित इस पुस्तक में भगवान महावीर के जो चित्र एवं चित्रांकन दिये गये हैं वे सौम्यता से पूर्ण हैं जबकि दिगम्बर जैन धर्मानुयायियों द्वारा प्रकाशित कृतियों में इसका प्रायः अभाव खटकता है। पुस्तक प्रणयन और प्रकाशन के लिये विदुषी लेखिका और प्रकाशक साधुवाद के पात्र हैं।

(१०) **चतुर्गति भागाभाग पूर्वार्द्ध** : ले. पं. किशनचन्द जैन 'भाईसाहब', अलवर; सं. श्री महावीर प्रसाद जैन 'स्वतन्त्रता सेनानी'; प्र. श्री दिगम्बर जैन साहित्य प्रकाशन समिति, ३३२, स्कीम नं. १०, अलवर-३०१००१ (राजस्थान); प्र.सं. २००८; पृ. २५६; लागत मूल्य रु. ८०/- और न्यौछावर मूल्य रु. २०/-

धरसेनाचार्य के उपदेश से पुष्पदन्त-भूतबलि मुनिद्वय द्वारा ७५ ई. में प्रणीत **षट्खण्डागम** पर आ. वीरसेन द्वारा ७८० ई. में निबद्ध **धवला टीका** (१६ भाग) की पुस्तक ३ व ५ के आधार पर नरक, तिर्यंच मनुष्य और देव इन चार गतियों के भाग और अभाग का ज्ञान कराने हेतु प्रस्तुत कृति का प्रणयन हुआ है। मंगलाचरण के अतिरिक्त २२ अध्यायों में यह कृति विभक्त है और क्रमशः अध्याय ४, ५, ६ व ७ में इन चार गतियों का वर्णन है। शेष अध्यायों में अन्य विषय लिये गये हैं। बहुज्ञानी विद्वान लेखक ने गूढ़ विषय पर लिखी गई इस पुस्तक में कुछ रोचक प्रसंग और प्राचीन कृतियों के उद्धरण आदि यथास्थान देकर मरुभूमि में उद्यान

खिलाने का सत्प्रयास किया है। पुस्तक के प्रणयन, सम्पादन और प्रकाशन के लिये क्रमशः लेखक, सम्पादक और प्रकाशक साधुवाद के पात्र हैं।

(११) मैनासुन्दरी : ले. श्री राजबहादुर 'जैनी साहब'; प्र. दिल्ली पब्लिकेशन एण्ड फिल्म इंटरनेशनल (रजि.), एफ-१४२, मंगल बाजार, लक्ष्मीनगर, दिल्ली-११० ०९२; द्वि सं. २००८; पृ. १८१; मूल्य रु. २००/-

भारत की स्वतन्त्रता के साथ जन्मे, कई कृतियों के प्रणेता, प्रख्यात कथाकार एवं उपन्यासकार श्री राज बहादुर जैन ने भारतीय इतिहास, संस्कृति, आस्था, प्रेम-विश्वास, दीक्षा, मर्यादा और कर्म से जुड़ी राजकुमारी मैनासुन्दरी की लोकप्रिय कथा को प्रस्तुत रोचक उपन्यास का रूप प्रदान किया है। सरल-सुबोध हिन्दी में प्रणीत इस कृति में नायिका मैनासुन्दरी और नायक श्रीपाल के जीवन में भाग्य और पुरुषार्थ का अद्भुत सम्मिश्रण लिये सुख-दुखों की इन्द्रधनुषी छटा का सुन्दर चित्रण जैनधर्म के कर्म सिद्धान्त और सिद्धचक्रविधान की महिमा के साथ किया गया है। इस सुकृति के प्रणयन हेतु लेखक 'वात्सल्य रत्नाकर पुरस्कार-२००७' तथा 'अभिनव साहित्य दिनकर' के मानद विरुद से सम्मानित हो चुके हैं। हमारा भी उनको अभिनंदन है।

निम्नलिखित साहित्य की प्राप्ति भी साभार स्वीकार की जाती है-

(१) **आचार्य कुन्दकुन्द विरचित प्रवचनसार आचार्य प्रभाचन्द्र विरचित सरोजभास्कर टीका और आचार्य विद्यासागर कृत पद्यानुवाद सहितः** सम्पादक एवं अनुवादक मुनि श्री प्रणम्यसागर; प्र. धर्मोदय साहित्य प्रकाशन, खुरई रोड, सागर (म.प्र.); प्र.सं. जून २००७; पृ. २४०; लागत मूल्य रु. ५०/-

(४) **आचार्य कुन्दकुन्द विरचित लिङ्गशीलप्राभृतस्य नन्दिनी टीका आचार्य विद्यासागर कृत पद्यानुवाद सहित :** टीकाकार एवं अनुवादक-मुनि श्री प्रणम्यसागर; प्र. धर्मोदय साहित्य प्रकाशन, खुरई रोड, सागर (म.प्र.); प्र.सं. अगस्त २००८; पृ. ८४; लागत मूल्य रु. ३५/-

(३) **श्री दिगम्बर जैन पारिवारिक निर्देशिका २००८ :** सम्पादक श्री सिद्धार्थ जैन सर्राफ; प्र. श्री कैलाशचन्द्र जैन सर्राफ, अध्यक्ष, भा. दि. जैन (धर्म संरक्षिणी) महासभा अवध प्रान्त, चौक सर्राफा, गोल दरवाजा, लखनऊ; पृ. ३५२- इस निर्देशिका में उत्तर प्रदेश में क्रमशः फैजाबाद, गोण्डा, बहराइच, श्रावस्ती, हरदोई, सीतापुर, लखीमपुर खीरी, बाराबंकी, उन्नाव, कन्नौज, फर्रुखाबाद, नेपालगंज,, लखनऊ, रायबरेली, सुलतानपुर, प्रतापगढ़, कौशाम्बी और इलाहाबाद

इन १८ जनपदों में रह रहे २२६३ दिगम्बर जैन परिवारों का विवरण संकलित किया गया है। इस श्रमसाध्य निर्देशिका की प्रस्तुति हेतु संकलक, सम्पादक व प्रकाशक साधुवाद के पात्र हैं।

(४) **परशुरामाचा वध** : ले महावीर सांगलीकर; प्र. श्री नरेश जाधव, सुभौम प्रकाशन, ३, मंजुला निवास, स.न. ४६३२, चिंचवड पूर्व, पुणे-४११ ०१२; प्र. सं. मार्च २००६; पृ. १६; मूल्य रु. १०/-

ऋषि जमदग्नि के पुत्र परशुराम ने पृथ्वी को इक्कीस बार क्षत्रियों से निश्शेष किया था, यह सर्वमान्य धारणा है। परशुराम कैसे थे, इसका वर्णन वैदिक-ब्राह्मणीय साहित्य में प्रभूत रूप से उपलब्ध है। जैन साहित्य में भी परशुराम का उल्लेख है। ब्राह्मण-क्षत्रिय संघर्ष, वैदिक-जैन संघर्ष का विवरण भी उसमें मिलता है। प्रस्तुत कृति में लेखक ने जैन साहित्य के आधार से परशुराम की कथा को नवीन रूप देने का प्रयास किया है। उसके अनुसार हस्तिनापुर के इक्ष्वाकुवंशीय चक्रवर्ती सुभौम ने अपने पिता राजा कार्तवीर्य सहस्रार्जुन के वध का प्रतिशोध लेने हेतु परशुराम का वध किया था। वैदिक-ब्राह्मण साहित्य इस विषय में मौन है। पुस्तक मराठी भाषा में प्रणीत है। जैन साहित्य के आलोक में परशुराम की कथा के इस नवीन पक्ष को प्रस्तुत करने हेतु लेखक साधुवाद के पात्र हैं।

(५) **कल्याण पथ (स्मृति ग्रन्थ)** : सं. श्री अनूपचन्द्र जैन, एडवोकेट; प्र. आचार्य कल्याणसागर स्मृति ग्रन्थ प्रकाशन समिति, फिरोजाबाद; सं. २००१; पृ. ३३३+चित्र; मूल्य स्वाध्याय —२१ अक्टूबर, १९९३ ई. को दिवंगत हुए 'णमोकार वाले बाबा' के नाम से प्रसिद्ध आचार्य कल्याणसागर जी की स्मृति में प्रकाशित इस ग्रन्थ में आचार्य श्री के प्रति विनयांजलि- श्रद्धाञ्जलि और उनके जीवन एवं व्यक्तित्व के परिचय के अतिरिक्त जैन धर्म, दर्शन एवं संस्कृति विषयक आलेख समाहित हैं। ग्रन्थ के सुसम्पादन हेतु बन्धुवर अनूपचन्द्र जी साधुवाद के पात्र हैं।

(६) **श्री स्याद्वाद महाविद्यालय शताब्दी वर्ष स्मारिका** : सं. प्रो. फूलचंद जैन प्रेमी; प्र. श्री स्याद्वाद महाविद्यालय, भदैनी, वाराणसी; प्र. वर्ष २००६; पृ. २००; मूल्य रु. ५०/- — सन् १९०५ ई. की श्रुतपंचमी १२ जून को पूज्य गणेशप्रसाद वर्णी जी के सत्प्रयासों से स्थापित स्याद्वाद महाविद्यालय वाराणसी द्वारा अपनी जीवन-यात्रा के १०० वर्ष पूर्ण करने के उपलक्ष में प्रकाशित इस स्मारिका में शुभकामना संदेशों के अतिरिक्त इस संस्था से जुड़े रहे विद्वान मनीषियों के संस्मरण समाहित हैं जिनमें इसकी स्थापना से लेकर इसमें आये विविध पड़ावों के विषय में

प्रकाश डाला गया है। साथ ही १२ जून, १६०५ से लेकर २३ जुलाई, २००४ तक संस्था में प्रवेश पाये १२२८ छात्रों का विवरण प्रकाशित कर समाज के अनेक विद्वज्जन के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी भी संजोयी गई हैं। इसके संकलन-सम्पादन हेतु बन्धुवर फूलचंद जी साधुवाद के पात्र हैं।

(7) **JITO Souvenir-2008**: Pub. by Jain International Trade Organisaton, 7/10, Botawala Building, 2nd Floor, Horniman Circle Fort, Mumbai-400 023; 2008; pp. 118—JITO is a worldwide body of Jain Businessmen, Industrialists, Knowledge workers and Professionals in various fields reflecting their glory of ethical business practices. The Souvenir sheds light on various activities of the Organisation. It has been so nicely brought out that its editorial team deserves congratulations therefor.

- रमा कान्त जैन

विज्ञप्ति

अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर, द्वारा संचालित और राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, द्वारा मान्यता प्राप्त १ जनवरी २००६ से ३१ दिसम्बर २००६ की अवधि के **पत्राचार प्राकृत सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम'** एवं **'पत्राचार अपभ्रंश सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम'** में प्राकृत एवं अपभ्रंश भाषा सीखने का इच्छुक कोई भी व्यक्ति प्रवेश ले सकता है। आवेदन पत्र व नियमावली निदेशक, अपभ्रंश साहित्य अकादमी, दिगम्बर जैन नसियां भट्टारकजी, सवाई रामसिंह रोड, जयपुर-३०२००४ से निःशुल्क प्राप्त की जा सकती है। शुल्क-सहित आवेदन पत्र अकादमी कार्यालय में पहुंचने की **अन्तिम तिथि १५ दिसम्बर २००८** होगी।

जैन विद्या संस्थान, जयपुर, द्वारा संचालित **पत्राचार जैनधर्म दर्शन एवं संस्कृति सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम** सत्र अवधि-१ जनवरी, २००६ से ३१ दिसम्बर, २००६ तक में प्रवेश के इच्छुक व्यक्ति निर्धारित आवेदन पत्र व नियमावली निदेशक, जैन विद्या संस्थान, दिगम्बर जैन नसियां भट्टारकजी, सवाई रामसिंह रोड, जयपुर-३०२००४ से निःशुल्क मंगवा सकते हैं। शुल्क सहित आवेदन पत्र कार्यालय में पहुंचने की **अंतिम तिथि १५ दिसम्बर २००८** होगी।

समाचार विविधा

अमेरिका में पंचकल्याणक महा-महोत्सव

संयुक्त राज्य अमेरिका के ऐरीजोना राज्य के फिनिक्सनगर में जैन सेन्टर द्वारा चार एकड़ भूमि में मंगलायतन (अलीगढ़) की लघु प्रतिकृति के रूप में सिंह द्वार, अहिंसा स्तम्भ एवं श्री जिनमंदिर का निर्माण हुआ है। इस मंदिर में भगवान ऋषभदेव और भगवान महावीर स्वामी के विशाल पद्मासनस्थ जिनबिम्बों के साथ अन्य २२ तीर्थंकरों के जिनबिम्ब भी हैं। इन जिनबिम्बों का पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महा-महोत्सव **२० दिसम्बर से २६ दिसम्बर, २००८ तक** प्रतिष्ठाचार्य बाल ब्रह्मचारी पं. अभिनन्दन कुमार शास्त्री, मंगलायतन, अलीगढ़ और सह-प्रतिष्ठाचार्य बाल ब्रह्मचारी पं. हेमन्त भाई गांधी, सोनगढ़, के सहयोग से सम्पन्न होगा।

मुरादाबाद में तीर्थंकर महावीर मेडिकल कालेज

मुरादाबाद में पहले से ही डेन्टल कालेज तथा ३८१ शय्यायुक्त बहुविशेषज्ञता वाला अस्पताल संचालित कर रही तीर्थंकर महावीर इन्स्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेन्ट एण्ड टैक्नोलॉजी सोसायटी द्वारा तीर्थंकर महावीर मेडिकल कालेज स्थापित किया गया है। भारत सरकार, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, ने कालेज को सत्र २००८-०९ में १०० छात्रों के प्रवेश की अनुमति दे दी है। इनमें से १५ प्रतिशत सीटें मैनेजमेन्ट कोटे में मैरिट के आधार पर तथा शेष सीटें सी.पी.एम.टी. और यू.पी.सी.एम.ई.टी. के परिणाम के आधार पर भरी जानी हैं।

जिला संग्रहालय शहडोल का पुनः नामकरण

जैन समाज की भावनाओं का समादर करते हुए जिला संग्रहालय शहडोल का नाम पुनः तीर्थंकर महावीर संग्रहालय एवं उद्यान शहडोल कर दिया गया है।

सांगानेर में मोहिनी देवी बड़जात्या वानप्रस्थाश्रम का लोकार्पण

समाज कल्याण कार्यों और धार्मिक शिक्षण-प्रशिक्षण में रुचि रखने वाले, सेवानिवृत्त वानप्रस्थी महानुभावों के आवास हेतु सांगानेर के दिगम्बर जैन वीरोदय नगर परिसर में श्री राजकुमार बड़जात्या कोटा द्वारा स्व. मातेश्वरी मोहिनीदेवी बड़जात्या (मलकापुर-महाराष्ट्र) की स्मृति में बनवाया गया भव्य वानप्रस्थाश्रम २० जुलाई, २००८, ई. को लोकार्पित किया गया। इस आश्रम में आधुनिक साज-सज्जा युक्त १२ फ्लैट और ३ बड़े हाल हैं। इसके मानद मंत्री श्री नरेन्द्र कुमार पांड्या हैं।

मूडबिद्री में 'प्राकृत भाषा-विज्ञान कार्यशाला'

३ अगस्त, २००८ ई. को मूडबिद्री (कर्नाटक) के श्री जैन मठ में धवल-त्रय ट्रस्ट द्वारा एक दिवसीय प्राकृत भाषा-विज्ञान कार्यशाला आयोजित हुई जिसमें दक्षिण कन्नड जिले के १३ कालेजों के १२६ छात्र-छात्रा तथा २० सार्वजनिक व्यक्ति सम्मिलित होकर लाभान्वित हुए। श्री मठ के रमारानी शोध संस्थान में प्रातः १० बजे से सायं ४.३० बजे तक सम्पन्न कार्यशाला में प्राकृत भाषा, उस भाषा में रचित साहित्य, विभिन्न शास्त्र ग्रन्थ और शिलालेख; तथा उसके व्याकरण आदि विषयों पर चर्चा हुई। मूडबिद्री मठ के भट्टारक स्वस्ति श्री चारुकीर्ति जी ने समागत को मंदिर के निर्माण और वहाँ की शिल्प कलाकृतियों का परिचय दिया। कार्यशाला का उद्घाटन उजिरे के डॉ. यशोवर्मा ने और समापन आलवास के डॉ. एम. मोहन आल्वा ने किया।

बाहुबली प्राकृत विद्यापीठ, श्रवणबेलगोला, के परीक्षा परिणाम

श्रवणबेलगोल (कर्नाटक) स्थित बाहुबली प्राकृत विद्यापीठ के अन्तर्गत राष्ट्रीय प्राकृत अध्ययन और संशोधन संस्थान द्वारा संचालित प्राकृत पाठ्यक्रमों की परीक्षाएं वर्ष २००८ में कर्नाटक में कन्नड और हिन्दी माध्यम से ८ केन्द्रों पर तथा उत्तर भारत में हिन्दी माध्यम से १६ केन्द्रों पर ६ से ८ जुलाई को सम्पन्न हुई। १२ अगस्त को घोषित परीक्षा परिणाम के अनुसार विभिन्न पाठ्यक्रमों में कन्नड माध्यम से १२८ और हिन्दी माध्यम से १८३ परीक्षार्थी उच्च श्रेणी में उत्तीर्ण हुए। सभी सफल परीक्षार्थियों को प्रमाण-पत्र तथा प्रत्येक पाठ्य क्रम में प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय स्थान पाने वालों को क्रमशः स्वर्ण, रजत और कांस्य पदक २२ सितम्बर को श्रवणबेलगोल में आयोजित घटिकोत्सव (दीक्षान्त समारोह) में प्रदान किये गये।

राष्ट्रीय जैन पत्रकार सम्मेलन एवं संगोष्ठी

२४ अगस्त को इन्दौर में 'राष्ट्रीय जैन पत्रकार सम्मेलन' तथा 'वर्तमान में पत्रकारिता का दायित्व' विषयक संगोष्ठी डॉ. महेन्द्र कुमार जैन 'मनुज' और ब्र. जिनेश मलैया के संयोजकत्व में सम्पन्न हुई। सम्मेलन का उद्घाटन विशिष्ट अतिथि सुमित्रा महाजन सांसद ने किया। संगोष्ठी में लगभग ६० जैन पत्र सम्पादकों एवं श्रेष्ठ आमन्त्रित जनों ने सहभागिता कर बहुत ही प्रेरक, समाज सुधारक नई योजनाओं से समन्वित, आधुनिकतम टैक्नोलॉजी से सम्बन्धित वर्तमान में पत्रकारिता के दायित्व पर जनोपयोगी विचार रक्खे। इस अवसर पर 'अ.भा. जैन पत्र सम्पादक संघ' की नवीन

कार्यकारिणी का शपथ विधि समारोह भी हुआ। प्रो. वृषभप्रसाद जैन (लखनऊ) ने शपथ ग्रहण कराई। सम्मेलन में ६ प्रस्ताव भी पारित हुए जो संक्षेप में निम्नवत हैं-

१. सभी राजनैतिक दल चुनावों में जैन प्रतिनिधियों को समुचित प्रतिनिधित्व दें।

२. सभी राजनैतिक दल अपने चुनाव घोषणा पत्र में जैन धर्मावलम्बियों को केन्द्रीय स्तर पर अल्पसंख्यक दर्जा देने की घोषणा करें।

३. केन्द्रीय सरकार ऋषभ निर्वाण दिवस, सम्वतसरी और प्राकृत दिवस (श्रुत पंचमी) को प्रतिबंधित अवकाश की सूची में सम्मिलित्र करे।

४.केन्द्रीय प्रतियोगी परीक्षाओं में विषय के रूप में 'प्राकृत भाषा' को सम्मिलित किया जाय।

५. मध्यप्रदेश राज्य अल्पसंख्यक आयोग में जैन प्रतिनिधि मनोनीत किया जाय।

६. सभी पत्र-पत्रिकाएं वीतरागता की पावन अवधारणा की मर्यादा की पुष्टि करने वाले समाचारों एवं आलेखों का प्रकाशन करें, राग-पोषण के कार्यक्रमों/उपक्रमों के समाचार-प्रकाशन से विरत रहें ताकि जैनत्व की पहिचान विकृत न हो।

'जीतो' की 'श्रमण आरोग्यम' योजना

जैन इंटरनेशनल ट्रेड ऑर्गेनाइजेशन (जीतो) ने जैन डॉक्टर्स फेडरेशन के साथ मिलकर एक ट्रस्ट बनाया है, जिसके अन्तर्गत **'श्रमण आरोग्यम'** योजना प्रारम्भ की गई है। इस योजना के तहत दिगंबर, श्वेताम्बर मंदिर मार्गी, स्थानकवासी और तेरापंथी सभी संप्रदायों के जैन साधु-साध्वी भगवंतों को भारत में सूचीबद्ध ४२०० अस्पतालों/डिस्पेन्सरियों/क्लीनिकों में निःशुल्क उपचार प्रदान किया जायेगा। उपचार एलोपैथी, होम्योपैथी, आयुर्वेदिक या नैचरोपैथी किसी भी चिकित्सीय पद्धति से किया जा सकता है। सूचीबद्ध किसी भी अस्पताल में **आयु सीमा के बंधन बिना** हर तरह का मेडिकल, सर्जिकल और बचाव वाला उपचार, जिसमें एम.आर.आई., एंजियोग्राफी, सीटी स्कैन सभी तरह के डायनोस्टिक टेस्ट भी सम्मिलित हैं, किया जायगा। यह व्यवस्था की गई है कि **यह मेडिकल उपचार किसी भी जैन सिद्धान्त और परम्परा, जिसका पालन हमारे गुरु भगवंत करते हों, का उल्लंघन नहीं करे।** अस्पताल में भर्ती कराने पर उन्हें विशेष गैर-वातानुकूलित कमरा दिया जायेगा। जहाँ सूचीबद्ध अस्पताल/क्लीनिक/डिस्पेन्सरी नहीं है वहाँ उपचार नजदीकी असूचीबद्ध अस्पताल में किया जायगा। अस्पताल के पूरे बिल का भुगतान पैरामाउंट हेल्थकेअर मैनेजमेन्ट प्राइवेट लिमिटेड द्वारा इस योजना के अन्तर्गत किया जायगा। ५००० से

अधिक साधु-साध्वी भगवंतों को पहचान पत्र जारी किये जा चुके हैं। जिन्हें अभी तक पहचान पत्र नहीं मिले हैं और जिन्होंने अभी तक आवेदन पत्रक नहीं भरे हैं तथा जो योजना के विषय में और अधिक जानकारी पाना चाहते हैं वे कृपया जैन डाक्टर्स फेडरेशन, मुम्बई, के डॉ. सुजल शाह (मोबाइल नं. ९८३३६२३६३७) अथवा डॉ. भरत परमार (मोबाइल नं. ९८२००७०५८०) से सम्पर्क कर लें।

'जीतो' सम्मेलन व ट्रेड फेयर

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मेला और जैन प्रदर्शनी के साथ **'जीतो'** का आगामी सम्मेलन अहमदाबाद में **८ से ११ जनवरी, २००९ ई.** को आयोजित है जिसमें पूरे विश्व से पधारे हुए जैन व्यापारी और उद्योगपति अपनी सहभागिता निभायेंगे और व्यापार मेले में अपने उत्पादों व व्यावसायिक कार्यों को प्रदर्शित करेंगे। जैन पवेलियन में जैन धर्म व कला की प्रदर्शनी होगी। अधिक जानकारी हेतु जैन इन्टरनेशनल ट्रेड ऑर्गेनाइजेशन, सं. ५, दूसरी मंजिल, ७/१० बोटावाला बिल्डिंग, हॉर्नीमन सर्कल फोर्ट, मुम्बई-४०० ०२३ (दूरभाष ६६१०२००३/०४, फैक्स +९१-२२-६६१०२०९७) पर सम्पर्क करें।

जैन वर्ल्ड डॉट कॉम और उसके जनक विनोद भाई

जैन धर्म-दर्शन को विश्व के समक्ष लाने की लालसा से भारत में कारंजा नगर (महाराष्ट्र) में जन्मे और सम्प्रति अटलांटा (अमेरिका) निवासी श्री विनोद श्यामलाल दर्यापुरकर ने ''जैन वर्ल्ड डॉट कॉम' की शुरुआत अब से लगभग २० वर्ष पूर्व की थी। जैन संस्कृति की शास्त्रशुद्ध जानकारी जगत में फैले यह उसका उद्देश्य है। श्री दर्यापुरकर के प्रयास से अनेक जैन शास्त्र, काफी कुछ कथा साहित्य, भ. गोम्मटेश्वर के महामस्तकाभिषेक का चित्र रूप में चलता हुआ दर्शन, विश्वभर में जैनधर्म से संबंधित अनेक चर्चाएं, अनेक विद्वत् सम्मेलन व संगोष्ठियां, अनेक स्तोत्र, जैन कथाओं पर आधारित कार्टून चित्र मालिका, भक्ति-संगीत, दशलक्षण धर्म, जैन दर्शन में प्रयुक्त दुर्बोध शब्दों के अर्थ बताने वाला शब्दकोश, चित्रमय जैन बाराखड़ी, जैन पाक-क्रिया, जैन भोजन आहार तथा आठ हजार से अधिक छायाचित्र, नाटक, प्रेक्षा ध्यान, रेडियो वार्ताएं, संसार में स्थित सुन्दर भव्य मन्दिर, तीर्थस्थान तथा चौबीस तीर्थंकरों के चरित्र आदि आज जैन वर्ल्ड डॉट कॉम बेवसाइट पर आ गये हैं। यह बेवसाइट १४७ देशों में देखी जा रही है। छब्बीस भाषाओं के माध्यम से लोगों तक इसकी पहुँच है और लगभग ८० हजार व्यक्ति इसे देख रहे हैं। अहिंसा और अपरिग्रह जैसे जैन धर्म के सिद्धान्तों तथा शाकाहार के प्रचार में यह बेवसाइट अहम भूमिका निभा रही है। योग और ध्यान धारणा का प्रशिक्षण भी इसके द्वारा दिया जाता

है। इस डॉट कॉम में ५०० से अधिक व्यक्ति कार्यरत हैं जिनमें से ६० प्रतिशत अजैन हैं। कुछ अजैन कार्यकर्ता तो २० वर्षों से जैन सिद्धान्तों के अभ्यासी हो आचरण से जैन हो गये हैं। इस डॉट कॉम का कार्य किसी एक आम्नाय, सम्प्रदाय या पंथ तक सीमित नहीं है प्रत्युत इसका ध्येय जैनतत्त्व और विचारधारा को घर-घर तक पहुँचाना है। इस कारण क्रियाकाण्ड और उपासना पद्धति का इसमें महत्त्व नहीं है। 'जैन वर्ल्ड' दुर्लभ पुस्तकें उपलब्ध कराने की भी योजना बना रहा है। वह ईमेल द्वारा पूछे गये प्रश्नों का समाधान भी देता है। www.jainworld.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अपने भाई-बहनों में सबसे छोटे, श्री श्यामलाल दर्यापुरकर की अन्तिम सन्तान विनोद भाई को धार्मिक संस्कार अपनी माँ से उत्तराधिकार में मिले हैं। कारंजा में स्कूली शिक्षा पूर्ण करने के अनन्तर उन्होंने बी.ई. और एम.बी.ए. की डिग्रियां प्राप्त की और भारत में अपना कारोबार प्रारम्भ किया। तदनन्तर वह विदेश चले गये और कम्प्यूटर के क्षेत्र में मल्टीनेशनल कंपनियों में कार्य किया। संप्रति वह स्वतन्त्र व्यवसाय के रूप में अपनी साफ्टवेअर कंपनी चला रहे हैं। वह सात भाषाएं जानते हैं। उन्होंने जैन दर्शन के तत्त्वज्ञान के साथ-साथ वैदिक, सनातन, इस्लाम, क्रिश्चियनिटी, सूफी, ताओ आदि विभिन्न धर्मों के तत्त्वज्ञान का गहरा और तुलनात्मक अध्ययन किया है। व्यवसाय के निमित्त संसार के ५० से अधिक देशों का भ्रमण किया है। विविध योग पद्धतियों के जानकार विनोद भाई विगत २५ वर्षों से अन्तर्राष्ट्रीय जिज्ञासुओं को योग तथा ध्यान-धारणा का शास्त्रीय ज्ञान कराते हैं। रेडियो और टी.वी. के माध्यम से अपने विचार आधुनिक युग के अनुरूप सरल, अनुभूत उदाहरणों द्वारा प्रस्तुत करने में कुशल विनोद भाई तरुण वर्ग में लोकप्रिय हैं। लायन्स क्लब तथा Toast Master Club नामक संस्थाओं के माध्यम से वह 'संवाद साधने की कला' सिखाते हैं। बहुमुखी प्रतिभा के धनी विनोद भाई को सामाजिक, धार्मिक और व्यावसायिक कार्यों के कारण अनेक पुरस्कार-सम्मान प्राप्त करने का सौभाग्य रहा है।

रायबाग में प्राप्त प्राचीन मूर्तियां

७ अगस्त, २००८ ई. को कर्नाटक में बेलगांव जिलान्तर्गत रायबाग में एक घर की नींव खोदते समय पंचधातु तथा संगमरमर से बनी एक फुट ऊँची पद्मासनस्थ प्रभावली में विराजमान २४ तीर्थंकर तथा आदिनाथ, संभवनाथ, पार्श्वनाथ और वर्द्धमान महावीर ये पांच मूर्तियां प्राप्त हुईं। उन पर महावीर संवत् १५६४ (अर्थात् १०३७ ई.) और देवनागरी लिपि में लक्ष्मीसेन मठ का उल्लेख है। २४ अगस्त को पुनः हुई

खुदाई में वहाँ श्वेत संगमरमर और काले पाषाण से बनी ८ और मूर्तियां प्राप्त हुईं। उनमें ३ पादुकाएं भी हैं। ये सभी मूर्तियां दिगम्बर जैन आम्नाय की बताई जाती हैं। ये अभी सरकार की ओर से तालुका तहसीलदार के कब्जे में हैं और इनके सम्बन्ध में धारवाड विद्यापीठ के पुरातत्त्व विभाग के प्रमुख श्री षडाक्षरी और सुश्री सुलोचना पोतनीस शोध कार्य कर रहे हैं।

ध्यातव्य है कि रायबाग (जिला बेलगांव) स्थित लक्ष्मीसेन जैन मठ कोल्हापुर (महाराष्ट्र) के जैन मठ की एक शाखा है। स्वस्तिश्री लक्ष्मीसेन भट्टारक स्वामी रायबाग जाकर ये मूर्तियां देख आये हैं और स्थानीय जैन समाज उन्हें जिन मंदिर में रखाये जाने हेतु प्रयत्नशील है।

पारसनाथ एक्सप्रेस का श्री महावीरजी में ठहराव

अहमदाबाद-आसनसोल के मध्य चलने वाली पारसनाथ एक्सप्रेस ट्रेन सं. २६४१ व २६४२ का स्टापेज १४ अक्टूबर, २००८ ई. से (छह माह के लिये प्रयोगात्मक रूप से) सप्ताह में एक दिन श्री महावीर जी स्टेशन पर कर दिया गया है। बुधवार को श्री महावीरजी से दोपहर लगभग १.०० बजे चलकर यह ट्रेन पारसनाथ अगले दिन प्रातः ७.४५ पर पहुँचेगी तथा लौटकर उसी दिन वृहस्पतिवार को रात्रि में ६-१६ बजे पारसनाथ स्टेशन से चलकर श्री महावीर जी शुक्रवार को अपराह्न में लगभग ३.३० बजे पहुँचेगी।

जैन मन्दिर इन्दिरानगर लखनऊ में काव्य-संध्या

जैन मन्दिर इन्दिरानगर, लखनऊ, में हो रहे सिद्धचक्र विधान के क्रम में श्री दिगम्बर जैन सेवा संस्थान इन्दिरानगर द्वारा ११ नवम्बर, २००८ ई. को सायंकाल काव्य-संध्या आयोजित हुई। इसका सुसंचालन युवा कवि परवेश जैन ने किया। श्रीमती सूरज जैन द्वारा जिनवाणी-वन्दना से प्रारम्भ हुए कार्यक्रम में सर्वश्री ललित जैन, रोहित कुमार जैन, राजीव जैन 'चंचल', प्रासु जैन, अतुल जैन, परवेश जैन, पूनमचंद जैन, सुश्री गरिमा जैन, श्रीमती सूरज जैन, श्रीमती अल्पना जैन 'अवि', श्रीमती रमा अग्रवाल और श्रीमती बिन्दु जैन ने अपने काव्यपाठ द्वारा भक्ति के साथ-साथ विभिन्न रसों की सरिता प्रवाहित कर वातावरण रससिक्त किया। श्री पी. सी. जैन ने लखनऊ के दिवंगत कविवर पुष्पेन्दु जैन की रचना 'दुख भी मानव की सम्पत्ति है' सुनाकर उनका पुण्य स्मरण कराया। **शोधादर्श** के सम्पादक और वरिष्ठ कवि **रमा कान्त** जैन द्वारा अध्यक्षीय उद्बोधन और काव्यपाठ के साथ कार्यक्रम पूर्ण हुआ।

अभिनन्दन

श्रीमती रंजना जैन (सहधर्मिणी डॉ. सुदीप जैन, नई दिल्ली) को उनके शोध-प्रबन्ध **''महाकवि हस्तिमल्ल विरचित रूपकवाङ्मयस्य प्राकृतांशस्य भाषानुशीलनम्''** पर श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली, ने विद्यावारिधि उपाधि प्रदान की।

श्रीमती राजश्री जैन (ललितपुर) को उनके शोध-प्रबन्ध **''संत कवि विद्यासागर का जीवन और कृतित्व''** पर बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी, ने पी-एच.डी. उपाधि प्रदान की।

श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली, में प्राकृत भाषा विभाग के विभागाध्यक्ष **डॉ. सुदीप जैन** उक्त विद्यापीठ में प्राकृतभाषा के आचार्य (प्रोफेसर) नियुक्त किये गये तथा विद्यापीठ की 'विद्वत् परिषद्' के सम्मानित सदस्य भी मनोनीत किये गये।

२३-२४ अगस्त, २००८ को मुम्बई में इंडियन वेजीटेरियन कांग्रेस, चेन्नई, की स्वर्ण जयन्ती समारोह में स्वामी रामदेव द्वारा कोलकाता के **डॉ. चीरंजीलाल बगड़ा** और पुणे के चिकित्सक **डॉ. कल्याण गंगवाल** को **'शाकाहार मशाल वाहक'** उपाधि व पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

शिक्षक दिवस पर नई दिल्ली में सेठ सिताबराय लक्ष्मीचंद जैन हायर सेकेण्डरी स्कूल, विदिशा, के शिक्षक **डॉ. विद्यानंद जैन** तथा शास्त्रि परिषद के महामन्त्री **प्राचार्य अरुण कुमार जैन** को महामहिम राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल द्वारा **राष्ट्रीय शिक्षक पुरस्कार २००७** से सम्मानित किया गया।

तीर्थराज श्री सम्मेदशिखरजी की पावनता की सुरक्षा एवं विकास हेतु गठित **श्री सेवायतन संस्थान** को सम्पूर्ण झारखंड राज्य में मानव सेवा एवं ग्रामीण विकास के सर्वाधिक उत्कृष्ट कार्यों के लिये राज्य के सर्वोच्च सम्मान **'झारखण्ड रत्न'** से अलंकृत किया गया।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में जैन दर्शन के प्राध्यापक तथा सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी, में प्राकृत के प्रोफेसर एवं अध्यक्ष तथा डीन के पद से सेवानिवृत्त **डॉ. गोकुल चन्द्र जैन (इन्दौर)** को स्वतन्त्रता दिवस पर प्राकृत विद्या में योगदान हेतु प्राच्य विद्याओं के लिये दिये जाने वाले **राष्ट्रपति सम्मान** से सम्मानित किया गया।

कर्णाटक में विधानसभा और विधान परिषद चुनावों में ५ जैन धर्मानुयायी निर्वाचित हुए जिनके नाम हैं- **सर्वश्री संदीप पाटिल, अभय पाटिल, अभयचंद जैन, डी. सुधाकर और वीर पाटिल।**

कोलकाता के प्रसिद्ध मधुमेह चिकित्सक और समाजसेवी **डॉ. अशोक जैन** को श्री दिगम्बर जैन विकास परिषद कोलकाता के तत्वावधान में केन्द्रीय गृह राज्य मंत्री श्री श्रीप्रकाश जायसवाल द्वारा **'समाजरत्न'** अलंकरण से सम्मानित किया गया।

१२ अक्टूबर को ऋषभांचल (गाजियाबाद) में तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र., के आजीवन सदस्य **श्री विजय जैन लुहाड़िया, सासनी,** दिगम्बर जैन महासमिति के राष्ट्रीय अध्यक्ष निर्विरोध निर्वाचित हुए।

१२ अक्टूबर को ही लखनऊ में जैन मिलन द्वारा कन्नौज निवासी स्व. सवाईलाल जैन की पुण्य स्मृति में **प्राचार्य नरेन्द्र प्रकाश जैन, फिरोजाबाद,** को **"विश्व मैत्री सेवा सम्मान वर्ष २००८"** प्रदान किया गया।

श्री अंकुर अलया (ललितपुर) संघ लोक सेवा आयोग की सिविल सर्विस परीक्षा २००७ में आई.ए.एस. के लिये चयनित हुए।

श्री सुरेश जैन तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय, मुरादाबाद, के **प्रथम चांसलर** नियुक्त किये गये।

जयपुर के **डॉ. दिलीप जैन** को चिकित्सा और सामाजिक क्षेत्र में उल्लेखनीय सेवाओं हेतु नई दिल्ली में इण्डियन इंटरनेशनल फ्रेंडशिप सोसायटी द्वारा आयोजित सेमिनार में **'भारत ज्योति'** अवार्ड दिया गया।

वरिष्ठ पत्रकार **श्री ए. के. भण्डारी** प्रतिष्ठित समाचार एजेन्सी युनाइटेड न्यूज ऑफ इण्डिया (यू.एन.आई.) के नये मुख्य सम्पादक और महाप्रबंधक बने।

बिलासपुर में अखिल भारतीय फार्मेसी शिक्षक संघ की संगोष्ठी में **'सर्वश्रेष्ठ फार्मेसी वैज्ञानिक'** पुरस्कार डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय के **डॉ. एन. के. जैन** को दिया गया।

सुप्रसिद्ध जैन दर्शन के विद्वान **पद्मश्री डॉ. कुमारपाल देसाई** को इस वर्ष जैन विश्वभारती का प्रतिष्ठित **'आचार्य तुलसी अनेकान्त पुरस्कार'** प्रदान किया जायगा।

कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ, इन्दौर, ने **'अर्हत वचन'** के अंक १९ (१-२), जनवरी-जून, २००७, में प्रकाशित लेखों में से इन तीन लेखों के लेखकों को क्रमशः प्रथम, द्वितीय

और तृतीय पुरस्कार से सम्मानित किया — (१) **'जैन धर्म एवं विज्ञान'** हेतु **डॉ. अजित कुमार जैन, विदिशा,** २. 'Jainism unlocks the mystery of the universe' हेतु **डॉ. राजमल जैन, अहमदाबाद,** तथा (३) **'जैन आगम साहित्य में हिंसा हेतु उपस्थापित युक्तियां'** हेतु **डॉ. धर्मचन्द्र जैन, जोधपुर** को। साथ ही दिग. जैन उदासीन आश्रम ट्रस्ट के अन्तर्गत स्थापित कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ शोध केन्द्र, इंदौर, द्वारा वर्ष २००८ का पुरस्कार **डॉ. संविता जैन, उज्जैन,** को जैन साहित्य के लेखन, संपादन एवं प्रकाशन के क्षेत्र में समग्र अवदान हेतु प्रदान किया गया।

२ नवम्बर को चाकसू (राजस्थान) में **डॉ. महेन्द्र कुमार जैन 'मनुज' (इन्दौर)** को **सिरिभूवलय ग्रन्थ** को डिकोड करने का फार्मूला अन्वेषित करने के लिये **'वाग्भारती पुरस्कार'** से सम्मानित किया गया।

६ नवम्बर को नई दिल्ली में कश्मीरी कवि और आलोचक **अब्दुल रहमान राही** को **ज्ञानपीठ का ४०वां पुरस्कार** प्रदान किया गया।

मराठी साप्ताहिक 'जिनदास' के सम्पादक **श्री प्रमोद पंडित** को पत्रकारिता क्षेत्र में योगदान हेतु महास्वामी संस्थान मठ के भट्टारक लक्ष्मीसेन द्वारा **'समाजभूषण'** पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

राजस्थान निर्वाचन आयोग के सचिव **श्री आर. के. जैन** राजस्थान निर्वाचन आयोग के मुख्य निर्वाचन अधिकारी नियुक्त किये गये।

राजस्थान चैम्बर ऑफ कामर्स एण्ड इण्डस्ट्रीज के मानद सचिव **डॉ. के. एल. जैन** राजस्थान सूक्ष्म एवं लघु उद्यम सुविधा परिषद के सदस्य नियुक्त किये गये।

उपर्युक्त सभी सम्मानित महानुभावों का उनकी उपलब्धियों के लिये शोधादर्श परिवार अभिनंदन करता है और उन्हें अपनी शुभकामना अर्पित करता है।

सत्त्वेषु मैत्रीं, गुणिषु प्रमोदं,
क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम्।
मध्यस्थ-भावं विपरीतवृतौ,
सदा ममात्मा विद्धातु देव।।

– आ. अमितगति रचित
भावनाद्वात्रिंशतिका से

शोक संवेदन

२८ जुलाई, २००८ ई. को कटनी (म.प्र.) में ६० वर्षीय धर्मनिष्ठ पटवारी **पं. रघुवर प्रसाद कोठिया** का निधन हो गया। वह **शोधादर्श** के हितैषी श्री मोतीलाल जैन 'विजय', कटनी, के समधी थे।

१ सितम्बर को फिरोजाबाद में प्रमुख समाजसेवी दि. जैन महासमिति उ. प्र. /उत्तरांचल के संभागीय अध्यक्ष श्री सूरजभान रैमजा का निधन हो गया।

१४ सितम्बर को लखनऊ में तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र., की प्रबन्ध समिति के सम्माननीय सदस्य श्री अजय कुमार जैन कागजी की माताजी ८५ वर्षीया सरल स्वभावी धर्मनिष्ठ सुश्राविका **श्रीमती सीतादेवी जैन** का स्वर्गवास हो गया।

२ अक्टूबर को मुरैना में जैसवाल जैन समाज के वयोवृद्ध एवं कर्मठ सामाजिक कार्यकर्ता, 'जैसवाल जैन बंधु' पत्र के संस्थापक, श्री गोपाल दिगम्बर जैन संस्कृत महाविद्यालय, मुरैना, के मंत्री ८२ वर्षीय **श्री सुमतिचन्द्र जैन 'शास्त्री'** का स्वर्गवास हो गया।

१२ अक्टूबर को नोएडा में भारत सरकार की स्वास्थ्य सेवा के निदेशक पद से अवकाश प्राप्त सरल स्वभावी ६८ वर्षीय **डॉ. जिनेन्द्र कुमार जैन** का असामयिक निधन हो गया। वह तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र., के आजीवन सदस्य इंजी. महेश चन्द्र जैन, सैरीटॉस (यू.एस.ए.) के ज्येष्ठ भ्राता थे।

१५ अक्तूबर को जयपुर में समाजसेवी, वकील और दि. जैन महासमिति के संस्थापक सदस्य ६० वर्षीय **श्री रामचन्द्र कासलीवाल** नहीं रहे।

१० नवम्बर को नई दिल्ली में 'झरता करुणा स्रोत' के सम्पादक श्री प्रकाश चन्द्र जैन के ४० वर्षीय सुपुत्र **श्री प्रदीप कुमार जैन** का असामयिक निधन हो गया।

२५ नवम्बर को डालीगंज लखनऊ में ७८ वर्षीया सुश्राविका **श्रीमती रतनमाला जैन** (धर्मपत्नी स्व. श्री देवकुमार जैन), जो तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र. के संयुक्त मंत्री श्री नलिन कान्त जैन की सास थीं, का निधन हो गया।

शोधादर्श परिवार उपर्युक्त दिवंगत महानुभावों को अपनी भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है, उनकी आत्मा की चिर शान्ति और सद्गति के लिये जिनेन्द्र देव से प्रार्थना करता है तथा शोक संतप्त उनके स्वजनों-परिजनों के प्रति हार्दिक संवेदना व्यक्त करता है।

पाठकों के पत्र

शोधादर्श-६३ में 'नैतिकता की चादर' दिशाबोधक चिंतन है। श्री अशोक सहजानन्द जी को बधाई! नैतिकता का ग्राफ जिस द्रुत गति से गिर रहा है, सभ्यता के लोप का खतरा उत्पन्न हो गया है। दुखद यह है कि अनैतिक व्यवहार हमारे जीवन का अंग बन जाने के कारण सुधार की सम्भावनाएं क्षीण हो गयी हैं। अनैतिक व्यवहार से लक्ष्य पूर्ण करना और फिर नैतिकता की दुहाई देकर अपने को आदर्श रूप में प्रस्तुत करना धर्माचार्यों/चतुर श्रावकों/ विचारकों की नियत बन गयी है। सामान्यजन भ्रमित हैं।

शोधादर्श-६४ अंक का अवलोकन कर रहा था। सम्पादकीय बहुत ही सटीक है। असहिष्णुता से परिवार-समाज-संस्थाएं विकृत हो रही हैं। उच्चतम न्यायालय के सम्माननीय न्यायाधीश कानून की व्याख्या के साथ ही राजनैतिक और सामाजिक विसंगतियों, विकृतियों की ओर निर्भीकतापूर्वक सार्थक टिप्पणियों द्वारा देश को दिशाबोध दे रहा है। प्रयास नमन योग्य है। हमें सम्वेदनशील होकर उनकी भावनाओं का सम्मान कर तदनुसार व्यवहार करना चाहिये। (प्रकरण पर्यूषण पर्व में मांस एवं मांसाहारी वस्तुओं पर प्रतिबंध)

'जैन सन्देश शोधांक - एक पर्यालोचन' श्रम साध्य प्रस्तुति है। भाई डॉ. शशि कान्त जी को बधाई! जैन संघ मथुरा द्वारा प्रकाशित 'धवलकीर्तिमान' में यथावत प्रकाशन योग्य था। शोधार्थियों को दिशाबोधक है। अन्य सभी आलेख ज्ञानवर्धक, स्तरीय हैं। बधाई!

पाठकों के पत्र में सम्माननीय डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव सा. ने जानना चाहा है कि धनतेरस वस्तुतः ध्यानतेरस है, इसका कोई साहित्यिक साक्ष्य है क्या ? डॉक्टर साहब, भ. महावीर के जीवन से सम्बन्धित आध्यात्मिक घटनाएँ, जिनका उल्लेख प्रथमानुयोग शास्त्रों में हुआ है, ही इसका आधार है। काल प्रवाह में एवं अन्य घटनाओं के कारण पर्वों के स्वरूप में रूपांतरण होता रहा है। 'ध्यान तेरस' का चिंतन साधार, विश्वसनीय एवं युक्ति संगत है। डॉक्टर साहब की उत्सुकता हेतु बधाई!

शोधादर्श-६५ अंक आद्योपान्त पढ़ा। गुरुगुण कीर्तन-डॉ. महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य के व्यक्तित्व/कर्तृत्व से प्रभावित हुआ। अल्पायु में उन्होंने जो जैन न्यायशास्त्र की सेवाएं की हैं, वे प्रेरणादायक हैं। सम्पादकीय-अस्वीकार का अधिकार, श्री रमा कान्त

जी के गहन चिंतन एवं उदात्त साहस का सूचक है। शिथिलाचारी साधु-संत नवधाभक्ति की धारणा को प्रश्नचिन्हित करते हैं। जिनश्वेरी दीक्षा की पावनता हर कीमत पर बनाए रखना आवश्यक है। लड़कियों द्वारा बारात लौटाने की घटना साहसिक है। विवाह संस्था में एक विकृति उत्पन्न हुई हैं वह है शिक्षित सम्भ्रान्त लड़कियों द्वारा अजैन-अकुलीन यहां तक कि अति निम्न जाति के लड़कों से शादी करना। यह घातक परम्परा है। अभिभावकों को जागरूक रहना आवश्यक है अन्यथा समाज-संस्कृति के विकृत होने का खतरा टाला नहीं जा सकता।

डॉ. शशि कांत जी का आंगल भाषा का आलेख तथ्यपरक और उन्मुक्त चिंतन का श्रेष्ठ उपहार है। जैन समाज की दिशा और विकास को रेखांकित करता हुआ यह आलेख दिशाबोधक भी है। उसका हिन्दी अनुवाद प्रकाशित किया जाना चाहिये सर्वग्राहय हेतु। अपनी विशिष्टता कायम रखते हुए समग्र भारतीय विकास में जैनों के योगदान का बहुमूल्य स्थान है इसकी अभिव्यक्ति आवश्यक है। 'जलाभिषेक बनाम पंचामृत अभिषेक' आलेख के प्रकाशन हेतु आभार। सम्पादकीय टीप तर्कसंगत है। आचार्य श्री विद्यानंद जी मुनिराज ने परिस्थितिजन्य साक्ष्य से जलाभिषेक का निष्कर्ष ग्रहण किया है, उसी का उद्धरण दिया है। जागरूकता हेतु नमन!

'समसगढ़-भोपाल का पुरातत्व' हमारे अतीत के वैभव को व्यक्त करता है। वीर शासन जयंती पर गुरु पूर्णिमा का महत्व दर्शाने वाला स्व. श्री अजित प्रसाद जी का आलेख ज्ञानवर्धक है। पं. बनारसीदास जी एवं कविवर पुष्पेन्दु जैन की स्मृतियों/व्यक्तित्व को प्रकाशित किया, अच्छी परम्परा है। ऐसे व्यक्तित्वों का प्रकाशन प्रेरणा देता है।

श्री अजीत जैन 'जलज' ने वनस्पति : धर्म और विज्ञान के भ्रम-शोध टीप में अनेक बिन्दु रेखांकित किये हैं, जो विचारणीय हैं। जैनाचार का आधार त्रस हिंसा का त्याग और स्थावर हिंसा-आवश्यकतानुसार-अत्यल्प हेतु निरंतर जागरूकता है। जैन धर्म पर्यावरण का रक्षक धर्म कहलाता है उसका आधार अहिंसा की सूक्ष्म एवं व्यावहारिक अवधारणा है। बाह्य प्रारूप की अपेक्षा अंतरंग अभिप्राय महत्वपूर्ण है। भावहिंसा का त्याग नैतिक मूल्यों की स्थापना से शक्य है।

अन्य आलेख एवं स्थायी स्तम्भ सटीक-सार्थक दिशाबोधक टीप सहित प्रकाशित हैं। 'आत्मकल्याण के दस चरण' आलेख में दार्शनिक पुट का समावेश होने पर और अधिक उपयोगी होता। कुशल-श्रमसाध्य सम्पादन हेतु बधाई!

- डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल, अमलाई

खजुराहो स्थित भगवान् पार्श्वनाथ के भव्य मन्दिर से विलसित मुखपृष्ठ एवं **वर्धमान** महावीर स्वामी के भावपूर्ण चित्र तथा ज्ञानमाला जी जैन के सरस गीत से शोभित भीतरी पृष्ठ युक्त **'शोधादर्श-६५'** का स्तरीय और अत्युपादेय अंक आद्योपान्त अवलोकित कर अत्यन्त आनन्दानुभूति हुई। इसमें आपका सामयिक सुविचारित सम्पादकीय 'अस्वीकार का अधिकार' एवं गुरुगुण-कीर्तन : डॉ. महेन्द्र कुमार न्यायाचार्य विचारोत्तेजक होने से पठनीय लगा।

श्रीयुत् भाई डॉ. शशि कान्त जी जैन, डॉ. श्रीरंजनसूरिदेव, श्री अजित जैन के आलेखों के अतिरिक्त डॉ. गणेशदत्त सारस्वत का गीत और आपकी क्षणिकाएं रोचक लगीं। समासतः सम्पूर्ण अंक स्तरीय और संग्रहणीय है, जिसके लिए आपका सारस्वत समर्पित सत्प्रयास सर्वथा सराहनीय है।

- डॉ. कैलाशनाथ द्विवेदी, पूर्व प्राचार्य, अजीतमल (औरय्या)

शोधादर्श के ६५वें अंक का सम्पादकीय 'अस्वीकार का अधिकार' अत्यन्त सम-सामयिक है। निश्चय ही हर व्यक्ति को हर क्षेत्र में अयोग्य को अस्वीकार करने का अधिकार होना चाहिए। आपका सकारात्मक चिन्तन प्रणम्य है। 'गुरुगुण-कीर्तन' के अन्तर्गत डॉ. महेन्द्र कुमार न्यायाचार्य का पुण्य स्मरण सात्विक पुलक का उन्मेष करता है। प्रेरणा की दृष्टि से इस प्रकार की प्रस्तुति सर्वथा स्वागत योग्य है। डॉ. शशि कान्त का आंग्ल भाषा में लिखा लेख 'Awakening among the Jains during 19th-20th Centuries' अत्यन्त उपयोगी है। कई महत्वपूर्ण जानकारियां कराने में उनकी यह प्रस्तुति सक्षम है। आपके माध्यम से उन्हें हार्दिक साधुवाद ! उनकी यह प्रस्तुति अपने में शोध की अनन्त सम्भावनाएं लिए हुए है। डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव ने अपने आलेख में हिंसा बहुल समाज में अहिंसा की भूमिका पर सुन्दर प्रकाश डाला है। उनका यह निष्कर्ष कि 'प्राणिवध का सर्वथा परित्याग कर देना चाहिए' सार्वदेशिक तथा सार्वकालिक है। श्री बनारसीदास जैन का साहित्यिक परिचय प्रशंसनीय है। श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध' के आलेख ने कविवर पुष्पेन्दु जैन की स्मृति सजीव कर दी। सन् १९६० के दशक में वे कवि मंचों की शोभा हुआ करते थे। उनके साथ कविता पाठ करने का सौभाग्य मुझे भी प्राप्त है। वे पीड़ा और करुणा के कवि थे, इसमें दो मत नहीं। 'आत्मकल्याण के दस चरण' न केवल पठनीय है वरन् आचरणीय भी है। श्री रमा कान्त जैन की क्षणिकाएं सामयिक परिदृश्य को वाणी प्रदान करने वाली हैं।

कुल मिलाकर प्रस्तुत अंक एक संग्रहणीय विशेषांक की गरिमा अपने में संजोए हुए है। ऐसी उत्तम प्रस्तुति के लिए आपकी जितनी भी प्रशंसा की जाए कम है।

- डॉ. गणेशदत्त सारस्वत, सीतापुर

शोधादर्श अंक ६५ में सम्पादकीय 'अस्वीकार का अधिकार' अच्छा व समसामयिक है। 'गुरुगुण-कीर्तन', कवि पं. बनारसीदास जैन, 'समसगढ़ भोपाल का पुरातत्व' आदि लेख अच्छे हैं। डॉ. गणेशदत्त सारस्वत का गीत 'जो डाल का सिंगार है' अच्छा है। डॉ. महावीर प्रसाद जी की लम्बी कविता 'महावीर उतरो जीवन में' भी अच्छी है। सम्पादक जी को सुन्दर अंक के कुशल सम्पादन हेतु बहुत-बहुत साधुवाद!

- श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध', सआदतगंज, लखनऊ

मैं **शोधादर्श** पत्रिका से बराबर जुड़ा हुआ हूं और **शोधादर्श** में छपने वाला उसका विचार, उसमें आप दोनों विद्वानों के विचार मुझे अपने स्व. पिताजी के विचारों की याद ताजा कर देते हैं और मेरी रुचि उसके समग्रता में डूब जाने की होने लगी। इन दिनों मैं कुछ अलग रुचि अनुभव करने लगा जब से मेरा ध्यान गुरु वंदना एवं कीर्तन जैसे विषयों पर गया। अंक ६४ में पं. दौलतराम जी को पढ़ने के पश्चात् आज अंक प्राप्त हुआ ६५वां। मैंने डॉ. महेन्द्र कुमार जैन तक जितने भी गुरु कीर्तन पढ़े उससे लगा कि आप भी समाज को एक रचनात्मक मार्गदर्शन **शोधादर्श** के माध्यम से दे रहे हैं। जो अपनी ज्ञान की रुचि जगाती है वह जैन दर्शन की साधना में लीन रहे इन महान पुरुषों की देन है। इनके द्वारा समाज के प्रति किस प्रकार से उपकार किया गया एवं स्व पुरुषार्थ के द्वारा जीवन का मार्गदर्शन किया गया।

- श्री सुशील कुमार सेठी, उज्जैन

अंक ६५ शोधादर्श का आवरण पृष्ठ सुन्दर कलात्मक भगवान पार्श्वनाथ मंदिर से ओतप्रोत है जो इस बात को प्रदर्शित करता हुआ सा प्रतीत होता है कि सांसारिक उधेड़बुन के बीच आदमी को शांति की खोज कर आत्मिक संतोष की ओर अग्रसर होना चाहिए जो कि वास्तविक उसका लक्ष्य है।

गुरुगुण-कीर्तन के अन्तर्गत डॉ. महेन्द्र कुमार न्यायाचार्य के वास्तविक जीवन की झांकी के साथ-साथ उनकी साहित्य सेवा का जो विस्तृत विवरण प्राप्त होता है वह जीवन को प्रेरित कर सार्थकता की ओर अग्रसर होने का मार्ग प्रशस्त करता है।

अंक की सम्पादकीय 'अस्वीकार का अधिकार' पूर्ण रूप से जानने और उस ओर अग्रसर होने के लिए ठोस कदम उठाने की प्रेरणा देती है। जो उदाहरण अखबारों

के समाचारों के दिए गए हैं वे ऐसी वास्तविकता लिए हुए हैं कि उन पर गंभीरता से विचारने की नितान्त आवश्यकता प्रतीत होती है। अच्छा मार्गदर्शन दिया गया है।

आगमिक तथ्यों के आलोक में 'जलाभिषेक बनाम पंचामृत अभिषेक' अच्छा शोधपूर्ण आलेख है। वास्तविकता बड़ी कुशलता से सामने रखकर सोचने समझने को बाध्य करता है।

कवि पं. बनारसीदास जैन, कविवर पुष्पेन्दु जैन आलेख संबंधितों के बारे में विस्तृत जानकारी जो भी रखते हैं वो सारगर्भित है। बनारसीदास संबंधी स्थिति कई नवीन वास्तविकता सामने रखती है। डॉ. मालती जैन को इस दृष्टि से बधाई!

'आत्म कल्याण के दस चरण' अत्यन्त ही सुन्दर शोधपूर्ण आलेख है जो जीवन को सत दर्शन की ओर जाने की प्रेरणा देकर आनंदित करने के लिए सच्चा मार्ग दर्शाता है। गंभीरता से विचारणीय है।

वीर शासन जयंती, प्रभावक उपाध्याय ज्ञानसागर जी संबंधी आलेख संक्षिप्त होते हुए भी नवीनता से जानकारी सामने रखते हैं। विशेषकर ज्ञानसागर संबंधी स्थिति व साहित्य सेवा, लगन, निष्ठा और परिश्रम की सीख देती है जिसका परिणाम सदैव शुभ होता है। ध्यान देने योग्य है।

अंक की अन्य सामग्री भी पठनीय है तथा साहित्य समाचार व समाचार विविधा सदा की भांति ज्ञानवर्द्धक जानकारी समने रखते हैं।

डॉ. गणेशदत्त सारस्वत का गीत बड़ी प्राकृतिक सुन्दर भावाभिव्यक्ति सामने रखकर पैनी दृष्टि से निहारकर सोचने समझने को प्रेरित करता है। वे भी बधाई के पात्र हैं। इधर उधर जो और छोटी मोटी आध्यात्मिक पंक्तियां दी गई हैं वे भी आकर्षक हैं।

इस प्रकार **शोधादर्श** सुन्दर पठनीय सामग्री से ओतप्रोत होकर जीवन में माधुर्य और समरसता का संचार करता है। अंक प्रगति पथ पर है। इसके लिए सम्पादक मण्डल तथा सहयोगी भाई बधाई के पात्र हैं!

– श्री मदनमोहन वर्मा, ग्वालियर

शोधादर्श महान का पैंसठवां अंक,
पढ़ा आदि से अंत तक नाचा मनः मयंक।
गुरुगुण-कीर्तन में डाक्टर महेन्द्र कुमार जी आते हैं,
अल्प आयु में भी जीवन में सब कुछ वे दे जाते हैं,

ज्ञान पीठ के आदि निदेशक का कर्तव्य निभाया है,
'रमा कान्त' ने उनके कार्यों का सौरभ फैलाया है।
पिछले दो शतकों में आयी जैन धर्म की जागृति बेला,
'शशी कान्त' ने दर्शाया है अद्भुत लेख परम अलबेला,
पर यदि हिन्दी में होता यह लेख अनोखा जन हितकारी,
सोने में सुगन्ध मिल जाती सभी लाभान्वित होते भारी।
'डाक्टर श्रीरंजन सूरिदेव' जी सूक्ष्म बात बतलाते हैं,
हिंसा और अहिंसा को बारीकी से समझाते हैं।
श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध' ने हम सबको हर्षाया है,
'पुष्पेन्दु' महाकवि के जीवन पर नव प्रकाश फैलाया है।
फक्कड़ कवि पंडित बनारसी दास सामने आते हैं,
'डाक्टर मालती जैन' के द्वारा नया रूप वे पाते हैं।
'समयसार' नाटक महान उसका महत्त्व समझाया है,
दिव्य रूप उनके जीवन का हम सबको ही भाया है।
'रमाकान्त' की क्षणिकाओं की तो बस बात निराली है,
करती हैं गंभीर घाव पर दिखतीं भोली भाली हैं।
'श्री प्रशांत जी' चाह रहे हैं महावीर उतरें जीवन में,
नव प्रकाश भर दें वे आकर तन मन प्राणों में चेतन में,
अश्रु भरे नेत्रों से बरबस कब से उन्हें निहार रहे हैं,
उनके प्राण व्यथित व्याकुल हो कब से उन्हें पुकार रहे हैं।
अन्य सभी स्तंभ निराले सब का ज्ञान बढ़ाते हैं,
जन-जागृति साहित्य-प्रगति के बारे में बतलाते हैं।
जीवन-तत्व-रत्न बिखरे जो उन्हें स्वयं पाना होगा,
'शोधादर्श' महासागर में स्वयं डूब जाना होगा।

– डॉ. महावीर प्रसाद जैन 'प्रशान्त', लखनऊ

'शोधादर्श' –६५ प्राप्त कर धन्य हुआ। सशक्त एवं कुशल सम्पादन में अंक में समाहित सभी सामग्री पठनीय है।

–श्री छन्दराज ऊ पारदर्शी, उदयपुर

शोधादर्श का अंक ६५ पाकर धन्य हुआ। यह ऐसी पत्रिका है जिसकी मुझे प्रतीक्षा रहती है, यह एक आदर्श शोध पत्रिका है। इसमें प्रामाणिक और विश्वसनीय जानकारी रहती है। प्रस्तुत अंक में सम्पादकीय : अस्वीकार का अधिकार व अन्य लेख मध्य युग का एक फक्कड़ साहित्यकार कवि पं. बनारसीदास जैन व कविवर पुष्पेन्दु जैन मुझे अच्छे लगे हैं। अन्य आलेख भी पठनीय एवं उपादेय हैं। मेरा साधुवाद स्वीकार करें। **- श्री ब्रहमराज मित्तल, हांसी**

शोधादर्श-६५ पढ़ा। मुझे गर्व है कि हमारी प्राचीन मान मूल्यपरक साहित्य-शोध की संपादकीय परम्परा, इस पत्र से दीपित हो रही है जबकि हम सांस्कृतिक पत्रकारिता का पराभव काल भोग रहे हैं।

'अस्वीकार का अधिकार' सम्पादकीय में आपने ११ वीर बालाओं की पीठ थपथपाते हुए उन्हें मीडिया-ताकत दी है। आपने साहसिक संपादक के नाते इसी सम्पादकीय में यह लिखकर मुझको, मेरी धारणा को बल देते हुए कहा है- "श्रावकों द्वारा शिथिलाचारी साधु-संतों को अस्वीकार किया जाना समय की मांग है।" चलो, जैन पत्रकारिता क्षेत्र में चेतना का खांडा खड़का तो सही। **जैन दर्पण** (मा.) जयपुर के अतिथि संपादक के नाते मैंने इस विषय पर बहुत करारे लेख लिखे हैं। शिथिलाचार का उन्मूलन क्रियोद्धार क्रांति से ही संभव है। हमें समस्या उठानी ही नहीं समाधान की चुनौतियां भी लेखनी से लगातार सचेतन रखनी हैं। साधु-श्रावक कॉकस का सामना करना है। आपकी लेखनी की जय-यात्रा की आशा फलेगी।

जिनको न करे कोई याद, उन्हें करें हम जिन्दाबाद। इस अंक में आपने कविवर बनारसीदास जी, डॉ. महेन्द्र कुमार जी न्यायाचार्य एवं कवि पुष्पेन्दु जैन पर संग्रहणीय व स्पृहणीय सामग्री देकर कृतज्ञ पीढि का भाव-तर्पण समावर्तित किया है। इन लेखकों को मेरी वृद्ध काया की सृजन समृद्ध युवा लेखनी की शुभाशीष श्रद्धार्पित है। मेरे विद्वान मित्र डॉ. श्री रंजनसूरिदेव का अहिंसा की भूमिका वाला लेख मानस को झकझोरता है। उन्हें मेरा प्रणाम! 'समसगढ़ भोपाल का पुरातत्व' जैसे लेख तो हर अंक में समाविष्ट होने ही चाहिए।

- श्री ओंकारश्री, नई दिल्ली

I am beholden to you for sending me 'Shodhadarsh 65'. I have gone through it with great interest. My stay in Gujarat as Governor had brought me very close to this enlightened community there. Of course, one does not see any distincition

between Hindus and Jains and they treat each other with tremendous respect. I had made it a point to visit *Jain temples* in Ahmedabad and I always found the atmosphere peaceful and hospitable, The temple on the hill top next to Ashokan edict attracted lacs of people from all communities. I compliment Dr. Shashi Kant's efforts to enlighten people through his learned article. **-Dr. R. K. Trivedi,. Lucknow**

आज बाहरी और भीतरी तंत्र सदोष हैं। चारों ओर विनाश के बादल घिर रहे हैं। संकेत शुभ नहीं दिखते। **शोधादर्श** जैसे सत्प्रयास कुछ रोशनी दे सकें, यही कामना करता हूँ। **- डॉ. महेन्द्र सागर प्रचंडिया, अलीगढ़**

शोधादर्श मिला। मुझे **शोधादर्श** बहुत ही अच्छा लगा।

- श्री रमेशचन्द्र जैन, साहिबाबाद

शोधादर्श का ६५वां अंक पढ़कर आनन्द हुआ। अनेक जानकारियां मिलीं। आपका सम्पादकीय तो रूढ़िग्रस्त और जातिवादी हठाग्रह की आंखें खोलने वाला धारदार अस्त्र है। नारी को अब रक्षणीया न रहकर स्वायत्त जीवन की दिशा में आगे बढ़ना होगा। उसे समझना होगा कि वह खरीद-बिक्री की वस्तु नहीं है। उसे विवाहाकांक्षा और वैभवाकांक्षा से ऊपर उठकर, साहसपूर्वक विश्व को महिमामंडित करना होगा। मुझे तो पीड़ा होती है जब दशलक्षण की पूजा में पढ़ने में आता है कि 'कूरे तिया के अशुचि तन में काम रोगी रति करै, बहु मृतक सड़हि मसान माहिं काक ज्यों चोंचे भरें।' यह कैसी विडम्बना और निन्दनीय शब्दावली है और फिर भी पूजा करने वाली बहनें जोर जोर से इसे पढ़ती हैं। क्या कवि महोदय में इतना विवेक तक नहीं था ?

डॉ. महेन्द्र कुमार जी न्यायाचार्य अद्‌भुत प्रज्ञावान् थे, सहज कर्मठ थे, स्वाभिमानी थे। उनके जैसा व्यक्तित्व अब नहीं दीखता।

भोपाल के आसपास की पुरातात्विक धरोहर विषयक जानकारी का परिचय मिला। आपके पिताश्री ज्योति प्रसाद जी की व्यथा-वेदना हमारे विद्वानों को प्रेरित कर सकती हैं

डॉ. राजेन्द्र कुमार जी बंसल बहुश्रुत, अध्येता तथा आगमों के मंथन-आलोडन में निष्णात हैं। उनका अभिषेक विषयक आलेख शोधपरक है। पर सामान्य जनता के सामने प्रश्न यह है कि महत्वपूर्ण क्या है ? मूर्ति, अभिषेक या जीवन शुद्धि? हम

अभिषेक भी करेंगे और फोटो भी खिंचवायेंगे। कलशों की आर्थिक बोलियां भी लगायेंगे?

सुश्री डॉ. मालती जैन का बनारसीदासजी पर परिचयात्मक लेख संक्षेप में अच्छा है। पर मुझे लगता है कि इस महाकवि पर जितना काम होना चाहिए था, नहीं हुआ है।

साहित्य-सत्कार, समाचार विविधा आदि सामग्री भी उपयोगी है। वनस्पति : धर्म और विज्ञान के भ्रम वाली टिप्पणी या प्रश्न भी चिंतनीय हैं। इन प्रश्नों पर वैज्ञानिक दृष्टि से विचार होना चाहिए। हम देखते हैं कि बरसात में या उमस के समय लाइट के आसपास हजारों पतंगें पैदा हो जाते हैं। क्या इनमें आत्मा होती है? विद्युत और अग्नि का अन्तर भी स्पष्ट होना चाहिए।

- श्री जमनालाल जैन, सारनाथ

बुधजन -सतसई से

सनमतिपद सनमतिकरन, बन्दौं मंगलकार।
बरनै बुधजन सतसई, निजपरहितकरतार।।१।।
परमधरमकरतार हौ, भविजनसुखकरतार।
नित वंदन करता रहू, मेरा गहि कर तार।।२।।
भूख सहौ दारिद सहौ, सहौ लोक अपकार।
निंद काम तुम मति करो, यहै ग्रन्थ कौ सार।।३।।
दारू धात परवान में, नाहिं विराजै देव।
दैवभाव भावें भला, फलै लाभ स्वयमेव।।४।।
गति गति में मरते फिरै, मनतैं गया न फेर।
फेर मिटै तैं मनतना, मरै न दूजी बेर।।५।।

बुधजन-सतसई की रचना बज गोत्रीय खण्डेलवाल जैन बिरधीचन्द्र 'बुधजन' ने जयपुर में नृप जयसिंह के राज्यकाल में वि. सं. १८७९ (१८२२ ई.) की ज्येष्ठ कृष्ण अष्टमी को पूर्ण की थी।

लेखादि अनुक्रमणिका शोधादर्श ६१-६६

शोधादर्श ४२ में अंक १-४२ में प्रकाशित सामग्री की, **शोधादर्श** ४८ में अंक ४३-४८ में प्रकाशित सामग्री की, **शोधादर्श** ५४ में अंक ४६-५४ में प्रकाशित सामग्री की तथा **शोधादर्श** ६० में अंक ५५-६० में प्रकाशित सामग्री की अनुक्रमणिका दी गई थी। उसी क्रम में यहां उसके आगे **शोधादर्श** ६१-६६ में प्रकाशित सामग्रीं की अनुक्रमणिका दी जा रही है। **- नलिन कान्त जैन**

खण्ड-क : लेखक वृन्द

नाम लेखक/रचनाकार	लेखन शीर्षक	अंक	पृष्ठ
१. श्री अजित प्रसाद जैन	(१) पुरासम्पदा का संरक्षण	६१	२४-२५
	(२) वाग्देवी के अवतरण का पर्व श्रुत-पंचमी	६२	११-१४
	(३) जैन धर्म की सार्वभौमिकता	६३	१३-१६
	(४) पंचकल्याणक प्रतिष्ठाएं सादगी से	६४	१४
	(५) वीर शासन जयन्ती	६५	१४-१७
	(६) कुछ रोचक प्रश्न एवं समाधान	६६	११-१२
२. श्री अजित जैन 'जलज'	शोध टीप : वनस्पति : धर्म एवं विज्ञान के भ्रम	६५	५२-५३
३. श्री अनंत महादेवन	जीव हिंसा	६३	६६
४. डॉ. अनिल कुमार जैन	परिचर्चा : सवाल वर्तमान परिस्थितियों में नग्नत्व का	६१	४४-४७
५. डॉ. अनीता बोथरा	भिक्षा-विचार : जैन तथा वैदिक दृष्टि से	६२	३२-४२
६. श्री अमित जैन	भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन में सहारनपुर जनपद की जैन समाज का योगदान	६४	५३-५६
७. श्री अशोक सहजानन्द	नैतिकता की चादर	६३	५४-५८
८. डॉ. इंदरराज बैद	(१) संन्यासी-माहात्म्य (कुरल पर आधारित)	६१	५६
	(२) आदि भगवान (पद्य)	६३	६१
	(३) समदर्शिता (कुरल का भावानुवाद)	६४	६३
९. श्रीमती इन्दु कान्त जैन	(१) क्रोध	६४	४८-४६
	(२) आत्म कल्याण के दस चरण	६५	४६-५१
	(३) तनाव या डिप्रेशन	६६	३३-३५
१०. जस्टिस एम. एल. जैन	'मेरी भावना' लोकप्रिय क्यों ?	६३	२८-३२

११. श्री ॐ प्रकाश 'पारदर्शी'	(१) पारदर्शी-कुण्डलियां	६१	३३
	(२) पारदर्शी-छन्द	६२	५२
	(३) पारदर्शी-कुण्डली	६३	६८
	(४) पारदर्शी-कुण्डलियां	६४	६६
	(५) पारदर्शी दोहे	६५	२४
	(६) पारदर्शी दोहे	६६	५८
१२. श्री अंशु जैन 'अमर'	परिचर्चा : दिगम्बरत्व : एक चिन्तन	६१	४८-५१
	साहित्य सत्कार : ६१ (५७-५८) में ४ कृतियों का परिचय		
१३. डॉ. कपूरचंद जैन	नीम का पेड़ (पद्य)	६३	६८
१४. श्रीमती कुसुम सोगानी	जैन समाज में व्रत एवं त्योहारों का महत्व	६२	५४-६०
१५. श्री केवलचन्द जैन	कर्म सिद्धान्त का रहस्य	६६	४५
१६. श्री कैलाशचन्द्र जैन	दिगम्बर जैन समाज की जातियों का विवरण	६६	४६-५२
१७. श्री कैलाश नारायण टण्डन	Rock-Cut Cave Architecture of the Jains in Orissa	६६	२३-२६
१८. डॉ. कौमुदी बलदोटा	जैन और वैदिक परम्परा में वनस्पति विचार	६३	४१-५२
१९. डॉ. गणेशदत्त सारस्वत	(१) जिन्दगी (कविता)	६१	५३
	(२) प्रश्न ये हल आज करना चाहता हूँ	६२	५३
	(३) बड़ी भयंकर भूल है	६३	५३
	(४) गीत	६५	५३
	(५) आध्यात्मिक कुण्डलियां	६६	५६
२०. डॉ. चीरंजीलाल बगड़ा	नैतिकता विहीन धार्मिकता- एक खतरनाक स्थिति	६२	४८-५०
२१. डॉ. ज्योति प्रसाद जैन	(१) धन्यकुमार चरित्र के कर्ता गुणभद्र	६१	२१-२३
	(२) पञ्चाध्यायी का कर्तृत्व	६२	४-१०
	(३) अकलंकदेव और हरिभद्र का पूर्वापर	६३	९-११
	(४) मल्लिषेण प्रशस्ति	६४	९-१३
	(५) समसगढ़-भोपाल का पुरातत्त्व	६५	९-१३
	(६) सेठ खेमजी मूलजी भाई और सन्त गोविन्ददास	६६	८-१०
	(७) करे अमल जो उसकी जय-जयकार है।	६६	६५
२२. श्री जमनालाल जैन	सर्वोदय तीर्थ के नाम पर	६२	२०-२५
२३. डॉ. जैनमती जैन	(१) भगवती आराधना में भावना स्वरूप का विचार	६१	२७-३३
	(२) आदिपुराण में नारी	६३	३४-४०

२४. श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध'	(१) जिन जगकल्याण	६१	५५
	(२) सोरठे	६४	६६
	(३) कविवर पुष्पेन्दु जैन	६५	४३-४५
	(४) परम अहिंसा धर्म	६६	४०
२५. श्री दुलीचंद जैन	भारत में कितने शाकाहारी	६१	६४-६५
२६. कवि दौलतराम	(१) पद	६४	१४
	(२) पद	६६	१२
२७. श्री नलिन कान्त जैन	लेखादि अनुक्रमणिका अंक ६१-६६	६६	८८-६४
२८. पं. पन्नालाल जैन साहित्याचार्य	वीर-वन्दना	६१	६
२६. डॉ. परमानन्द जड़िया	(१) चिन्तन-कण	६२	६४
	(२) मुक्तक	६३	७१
३०. बेबी पलक जैन	Jains	६२	४७
३१. श्री प्रकाशचन्द्र जैन 'दास'	(१) महावीराष्टक स्त्रोत का पद्यानुवाद	६४	३२-३३
	(२) 'अरिहन्त' अथवा 'अरहन्त' (एक चिन्तन)	६४	४६-४७
३२. साध्वी प्रवीण कुमारी 'प्रीति'	अपरिग्रह : अनुत्तरौपपातिक सूत्र के संदर्भ में	६४	३७-४५
३३. कवि बुधजन	आध्यात्मिक पद	६५	८२
३४. भैया भगवती दास	कवित्त	६५	१३
३५. श्री भगवान भरोसे जैन	श्वेताम्बर परम्परा के अनुसार जैन आगमों की वाचना	६२	४४-४५
३६. कवि भागचन्द	महावीराष्टक स्तोत्र	६४	३०-३१
३७. कवि भूधरदास	जिनवाणी स्तुति	६६	७
३८. श्री मनोहर मारवडकर	परिचर्चा : भावना का व्यवहार नय और निश्चय नय स्वरूप	६२	६५-६६
३६. डॉ. महावीर प्रसाद जैन 'प्रशान्त'	(१) डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के प्रति स्नेहांजलि	६१	५४-५५
	(२) व्यापक चेतन खोज रहा हूँ	६२	६१
	(३) बने भगीरथ महावीर प्रभु	६३	६७
	(४) महावीर उतरो जीवन में	६५	५६-६०
	(५) महावीर का व्यापक आत्म प्रसार हो गया	६६	५३
४०. श्री महावीर श्रीमन्धर चव्हाण	दक्षिण भारत की जैन जातियां	६६	४६-४८
४१. डॉ. महेन्द्र सागर प्रचण्डिया	(१) जो प्रमाद से मुक्त हो गये, उनके दुर्दिन दूर हो गये	६१	५२

	(२) केवल वसन बदलने भर से, पूरे नहीं बदल जाते हैं	६२	४३
	(३) आध्यात्मिक गीत	६३	६६
	(४) आध्यात्मिक गीत	६४	६४
	(५) दीपावलि गीत	६६	४४
४२. डॉ. (कु.) मालती जैन	(१) जैन, बौद्ध एवं हिन्दु धर्म ग्रन्थों में अयोध्या	६२	२६-३१
	(२) मध्ययुग का एक फक्कड़ साहित्यकार कवि पं. बनारसीदास जैन	६५	३६-४२
४३. श्री मूलचन्द लुहाड़िया	यज्ञोपवीत का औचित्य	६६	३०-३२
४४. डॉ. राजेन्द्रकुमार बंसल	(१) साधु चर्या के मंगलमय छह काल	६१	३४-३५
	(२) परम कल्याणकारी ध्यानतेरस	६३	३३
	(३) आगमिक तथ्यों के आलोक में जलाभिषेक बनाम पंचामृताभिषेक	६५	२८-३५
	(४) स्वतन्त्र नारी संघ और सवारी करने का औचित्य क्या है ?	६६	२७-२६
४५. श्री लूणकरण नाहर जैन	(१) महावीर जयन्ती आई	६४	६१
	(२) प्रभु वीर बिना तेरा ध्यान कहां	६६	४३
४६. डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल	Contrbution of Jainism to the art traditon of India	६१	२६
४७. डॉ. विदुषी भारद्वाज	जैन दर्शन के आलोक में 'महावीराष्टक स्तोत्रम्'	६४	३४-३६
४८. डॉ. शशि कान्त	(१) महामानव महावीर	६१	७-१०
	(२) परिचर्चा : दिगम्बरत्व पर निरर्थक विवाद	६१	३६-४३
	(३) बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध के प्रभावक जैन सन्त	६२	१७-१६
	(४) भगवान महावीर की प्रथम सहस्राब्दी	६३	१७-२७
	(५) जीवदया और मीट टेक्नोलॉजी	६३	५६-६०
	(६) जैन संदेश शोधांक - एक पर्यालोचन	६४	१५-२६
	(७) Awakening among the Jains during 19th-20th centuries	६५	१८-२४
	(८) महावीर - एक ऐतिहासिक व्यक्तित्व	६६	१३-१६

साहित्य-सत्कार : ६२ (७३); ६३ (७२-७३); ६४ (६७-६६);
६६ (६०-६२) के अन्तर्गत ११ कृतियों का परिचय

४६. पं. शोभनाथ पाठक	वीर-वन्दना	६१	१०
५०. डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव	हिंसा बहुल समाज में अहिंसा की भूमिका	६५	२५-२७
५१. श्री सत्येन्द्र जैन	धांकड जाति	६२	५०
५२. डॉ. सतीश चन्द्र अवस्थी	The Jain Holy Places in Uttar Pradesh	६३	६२-६५
५३. श्री सन्दीप कान्त जैन	(१) इक्कीसवीं शताब्दी के एक दूरदृष्टा समाजोद्धारक सन्त-उपाध्याय ज्ञानसागर	६५	६१-६२
	(२) तमिलनाडु के बिल्लुपुरम जिले में प्राचीन जैन स्थल	६६	३८-४०
५४. प्रो. सागरमल जैन	आचार्य कुन्दकुन्द के ग्रन्थों में सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र का पूर्वापर क्रम	६६	२०-२२
५५. श्रीमती सितारा जैन	तीर्थक्षेत्रों पर सुरक्षा का अभाव	६२	६२-६३
५६. श्री सुरेश जैन बारौलिया	वीर शासन जयन्ती	६२	५१-५२
५७. श्री सुरेश जैन 'सरल'	अपनी बोली और अपनी जमीन	६२	४६-४७
५८. श्रीमती ज्ञानमाला जैन	वीर तेरी वंदना है	६५	आवरण पृ.

खण्ड-ख : सम्पादक श्री रमा कान्त जैन

अ- सम्पादकीय :	(४) श्री ऋषभदेव मन्दिर (केसरिया जी)	६१	११-२०
	(५) सन्त समागम	६२	१५-१६
	(६) संगठन का उपाय	६३	७-८
	(७) स्वागत योग्य निर्णय	६४	७-८
	(८) अस्वीकार का अधिकार	६५	५-८
	(६) धार्मिक पर्वों पर पशुवध बन्दी	६६	६-७
आ- गुरुगुण-कीर्तन :	(५३) पं. पन्नालाल जैन साहित्याचार्य	६१	१-६
	(५४) डॉ. हीरालाल जैन	६२	१-३
	(५५) डॉ. आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये	६३	१-६
	(५६) डॉ. नेमिचन्द शास्त्री ज्योतिषाचार्य	६४	१-६
	(५७) डॉ. महेन्द्र कुमार न्यायाचार्य	६५	१-४
	(५८) पं. मक्खनलाल शास्त्री	६६	१-५
इ- लेख :	(३०) निष्कम्प दीप शिखा - पद्मचंद शास्त्री	६१	७४-७६
	(३१) वीरचंद्र राघव जी गांधी	६३	१२
	(३२) 'तुमसे लागी लगन' के प्रणेता कवि माणकचंद पाटनी 'पंकज'	६३	७०-७१

	(३३) भारत के उद्योग एवं विज्ञान जगत का एक जाज्वल्यमान नक्षत्र-डॉ. विक्रम साराभाई	६४	४६-५२
	(३४) पं. बेचरदास जीवराज दोशी	६६	३६-३८
	(३५) श्रीपाल चरित	६६	४१-४३
	(३६) अज्ञात स्वतन्त्रता सेनानियों के अन्वेषक श्री फूलचन्द जैन	६६	५४-५८
ई- समाचार विमर्श :	(१२) देश में १०० नये बूचड़खाने	६१	६४
	(१३) श्री पद्मावती माता को २००७ फुट की चुनरी	६२	७७
	(१४) एच. डी. कुमार स्वामी पर बरसे मुनि तरुणसागर	६२	७७
	(१५) अहिंसा के पुजारी महात्मा गांधी के देश में हिंसा का बढ़ता ग्राफ	६३	७७-७८
	(१६) डॉ. चीरंजीलाल बगड़ा की मनोव्यथा	६३	७८
उ- रिपोर्ट :	(६) श्री अजित प्रसाद जैन का जन्म दिन पर पुण्य स्मरण	६१	६७
	(७) इतिहास मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन का पुण्य स्मरण	६१	६८
	(८) डॉ. शशि कान्त का अमृत महोत्सव	६१	६६-७०
	(६) तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र., का प्रगति प्रतिवेदन वर्ष २००६-०७	६२	६७-७२
	(१०) श्री नरेशचन्द जैन का अमृत महोत्सव	६३	८४-८५
	(११) श्री शान्तिलाल जैन बैनाड़ा	६३	८५
	(१२) तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ. प्र. का प्रगति प्रतिवेदन वर्ष २००७-०८	६५	५४-५८
ऊ- टिप्पणियां	(१) अमेरिका के जैन मन्दिर	६४	६०
	(२) अमेरिका के संग्रहालयों में जैन कलाकृतियां	६४	६०-६२

ए- सामायिक परिदृश्य क्षणिकाएं

६१ (६५); ६२ (६३); ६३ (२७); ६४ (६५); ६५ (७६); ६६ (३२)

खण्ड-ग : विविध स्तम्भ

साहित्य सत्कार : ६१ (५७-६३); ६२ (७३-७६); ६३ (७२-७६); ६४ (६७-७४); ६५ (६३-७१); ६६ (६०-६८) अन्तर्गत ६४ कृतियों का परिचय/समीक्षा

समाचार विविधा :	६१ (६६-७०); ६२ (७८-८१); ६३ (७६-८१); ६४ (७५-७८); ६५ (७२-७६); ६६ (६६-७४).	
अभिनन्दन :	६१ (७१-७३); ६२ (८३-८४); ६३ (८१-८३); ६४ (७६-८३); ६५ (८०-८१); ६६ (७५-७७)	
शोक संवेदन :	६१ (७७-७८); ६२ (८४); ६३ (८६-८७); ६४ (८३-८४); ६५ (६०); ६६ (७८)	
आभार :	६१ (७८); ६२ (८४); ६३ (८७); ६४ (८४); ६५ (२७); ६६ (२६)	
पाठकों के पत्र :	६१ (७६-८७); ६२ (८५-६१); ६३ (८८-६४); ६४ (८५-६०); ६५ (८३-८६); ६६ (७६-८७) में ६६ पाठकों के पत्र	

खण्ड - घ : प्रकीर्ण

संकलित	पूज्यपाद देवनन्दि की वीर-वन्दना	६१ (आवरण पृ.)
	श्री सकलकीर्ति द्वारा वीर-वन्दना	६२ (आवरण पृ.)
	कवि भागचन्द रचित महावीराष्टक स्तोत्रम, श्लोक ६	६२ (१४)
	कवि माणिक चन्द पाटनी 'पंकज' द्वारा रचित 'पारस प्यारा' भजन	६३ (४०)
	कुमुदचन्द्र कृत कल्याण मन्दिर स्तोत्र	६३ (६४)
	सरस्वती वन्दन	६४ (८)
	श्री महावीर वचनामृत	६५ (१७)
	सरस्वती वन्दना विश्वलोचन कोश से	६५ (आवरण पृ.)
	अमितगति भावनाद्वात्रिंशतिका से	६६ (७७)
	बुधजन-सतसई से	६६ (८७)
आवरण पृष्ठ पर चित्र :	श्री ऋषभदेव मन्दिर (केसरिया जी)	६१
	श्री आदिनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर, रायगंज, अयोध्या	६२
	जल मन्दिर, पावापुरी (नालन्दा), बिहार	६३
	जैन सरस्वती मूर्ति, बीकानेर, पल्लू	६४
	भगवान पार्श्वनाथ मन्दिर, खजुराहो	६५
	शान्तिनाथ मन्दिर, देवगढ़	६६

करे अमल जो उसकी जय-जयकार है

पर उपदेश सरल है प्यारे, करे अमल जो उसकी जय-जयकार है।

हिंसा झूठ औ व्यभिचार,
चोरी अनीति असदाचार,
पाप का बाप है लोभ विकार,
मानव वह जो करता इनका परिहार है।
करे अमल जो उसकी जयजयकार है।। १।।

कुव्यसनों में जो नहीं फसता,
पाप-पंक में कभी न धसता,
विपत्ति में भी जो है हसता,
सफलता उसका ही एक अधिकार है।
करे अमल जो उसकी जयजयकार है।।२।।

श्रद्धा-ज्ञान-कर्म की त्रयी का,
न्याय नीति सुखद त्यागमयी का,
पर उपकारी आत्म जयी का,
जग करता वंदन बारम्बार है।
करे अमल जो उसकी जय-जयकार है।। ३।।

- डॉ. ज्योति प्रसाद जैन 'ज्योति'

आवश्यक सूचना

इस वर्ष का वार्षिक शुल्क ५० रु. (पचास रुपये), यदि अभी नहीं भेजा हो, तो कृपया मनीआर्डर द्वारा 'महामंत्री, तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ. प्र., ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ–२२६ ००४', को शीघ्र ही भेजने का अनुग्रह करें। चेक लखनऊ के ही स्वीकार होंगे। एक प्रति का मूल्य २० रु. (बीस रुपये) है। मनीआर्डर भेजने पर उसकी सूचना एक पोस्ट कार्ड पर भी अपने पूरे नाम पते के साथ अवश्य भेजें।

शोधादर्श चातुर्मासिक पत्रिका है और सामान्यतया इसके अंक मार्च, जुलाई व नवम्बर में प्रकाशित होते हैं।

शोधादर्श में प्रकाशनार्थ शोधपरक एवं अप्रकाशित लेख आमंत्रित हैं। लेख कागज के एक ओर सुवाच्य अक्षरों में लिखित अथवा टंकित होना चाहिये और उसमें यथावश्यक सन्दर्भ/स्रोत सूचित किये जाने चाहिये। यथासंभव लेख ३–४ टंकित पृष्ठ से अधिक न हो। *लेख की एक प्रति अपने पास अवश्य रख लें। अप्रकाशित लेख–रचना लौटाना कठिन होगा।*

शोधादर्श में समीक्षार्थ पुस्तकों तथा पत्र–पत्रिकाओं की दो *प्रतियां* भेजी जायें।

शोधादर्श में प्रकाशित लेखों को उद्धरित किये जाने में आपत्ति नहीं है, परन्तु *शोधादर्श* का श्रेय स्वीकार किया जाना और पूर्ण सन्दर्भ दिया जाना अपेक्षित है।

प्रकाशनार्थ लेख और समीक्षार्थ पुस्तक/पत्रिका सम्पादक को ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ–२२६ ००४, के पते पर भेजे जायें।

लेखक के विचारों से सम्पादक मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। लेखों में दिये गये तथ्यों और सन्दर्भों की प्रामाणिकता के संबंध में लेखक स्वयं उत्तरदायी है।

सभी विवाद लखनऊ में स्थित सक्षम न्यायालयों /न्यायाधिकरणों के क्षेत्राधिकार के अधीन होंगे।

सुधी पाठक कृपया अपनी सम्मति और सुझावों से अवगत करावें ताकि पत्रिका के स्तर को बनाये रखने और उन्नत करने में हमें प्रोत्साहन तथा मार्गदर्शन प्राप्त होता रहे। कृपया पत्रिका पहँचने की सूचना भी देवें।

– सम्पादक